TEXT PROBLEM WITHIN THE BOOK ONLY

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182215

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP—23—4-4-69—5,000.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H82 G72A   Accession No. P. G. H27

Author गोविन्ददास

Title अष्टदल 1940

This book should be returned on or before the date last marked below.

अष्टदल

(आठ सामाजिक एकांकी नाटक)

—:*:—

गोविन्ददास

प्रकाशक

रामनारायण लाल

पब्लिशर और बुकसेलर

इलाहाबाद

मूल्य १।)

Printed by
RAMZAN ALI SHAH at the NATIONAL PRESS,
ALLAHABAD.

3m. 28.

1940.

विषय सूची

विषय	पृष्ठ
१—जाति-उत्थान	१
२—निर्माण का आनंद	२८
३—सुदामा के तन्दुल	४०
४—यू नो	५४
५—आई सी	५९
६—फाँसी	७४
७—भूख-हड़ताल	८२
८—विटेमिन	९४

—: ❀: —

जाति-उत्थान

पात्र, स्थान

पात्र

रग्घूमल—पीछे से रघुराजसिंह—एक कायस्थ

सत्तूपरसाद—पीछे से सीताशरण—एक धूसर

मुलुआ—पीछे से मल्लिनाथ—एक नाई

स्थान

एक कसबा

एक नगर

उपक्रम

स्थान—एक कसबे के एक कच्चे मकान का एक कोठा

समय—प्रातःकाल

[कोठे की दीवालें देखने से मालूम होता है कि कच्ची दीवालें होने पर भी उन पर मिट्टी चढ़ा कर, उन्हें सफ़ेद कलई से पोत, स्वच्छ बनाने का प्रयत्न किया गया है। पीछे के दीवाल में एक खिड़की है, जिसमें लकड़ी का जंगला लगा है। दाहनी तरफ़ की दीवाल में एक दरवाज़ा है। खिड़की और दरवाज़े की चौखट, किवाड़ इत्यादि देहाती लकड़ी के हैं, पर उन पर तेल पानी कर उन्हें भी स्वच्छ रखा गया है। छत में बोरे बँधे हैं, पर वे ठीक ढंग से, एक से करके बाँधे गये हैं। ज़मीन पर साफ़ सुथरी जाजम है; उस पर एक छोटी सी गद्दी। गद्दी पर तीन मसनद हैं और मसनदों से टिके हुए रघूमल, सत्तूपरसाद और मुलुआ बैठे हैं। तीनों युवक हैं, अवस्था लगभग २२, २३ वर्षों के बीच में। रघूमल साँवले रंग का ऊँचा—पूरा मनुष्य है; सत्तूपरसाद गेहुएँ वर्ण का ठिगना और कुछ मोटा आदमी; मुलुआ काले रंग का साधारण ऊँचाई का दुबला पतला व्यक्ति। तीनों के सँवारने योग्य लंबे बाल और छोटी-छोटी मूँछें हैं। रघूमल और सत्तूपरसाद कोट और पायजामा पहने तथा फेल्ट कैप लगाये हैं, मुलुआ कोट और धोती पहने तथा दुपलिया टोपी लगाये है।]

रघूमल—भाई, हरेक नौजवान के सामने पढ़ना-लिखना ख़तम करने के बाद यही सवाल उठता है।

सत्तूपरसाद—हम तीनों के सामने तो विद्यार्थी अवस्था में भी यह प्रश्न सदा उठता रहा है।

मुलुआ—और हम लोगों ने इस पर विचार भी कम नहीं किया है।

रघूमल—तो उसी विचार पर हम लोग क़ायम रहना चाहते हैं ?

सत्तूपरसाद—मैं तो समझता हूँ कि उस विचार को कार्य रूप में परिणत करने से अच्छा काम हम अपने जीवन में कर ही नहीं सकते।

मुलुआ—हाँ, अपने जाति-उत्थान से अधिक संसार में दूसरा महान और पवित्र कार्य हो ही कौनसा सकता है!

सत्तूपरसाद—फिर, रघ्घूमलजी, हम दो ने हिन्दी, संस्कृत और अंगरेज़ी पढ़ी है, आपने इन तीन भाषाओं के साथ उर्दू और फ़ारसी भी। इस प्रकार के पढ़े लिखे युवकों से ही तो देश और जाति को आशा रहती है।

मुलुआ—और उस आशा को पूर्ण करने के लिए हमारे हृदय में कार्य करने की भावनाएँ भी हैं।

रघ्घूमल—(विचारते हुए) मैं यही सोच रहा था कि भावनाएँ सच्ची और गहराई लिए हुए हैं न, सतह पर ही तो नहीं ; नौजवानी का जोश भर तो नहीं है, क्योंकि उन भावनाओं के मुताबिक़ काम करने के लिए अपनी सारी ज़िन्दगी निसार कर देनी होगी, न जाने क्या क्या क़ुर्बान करना पड़ेगा।

सत्तूपरसाद—हमारी भावनाओं की गहराई का पता तो इसी से लग जाता है कि बार बार वे ही भावनाएँ हमारे मनों में उठती हैं।

मुलुआ—और ज़िन्दगी यदि इस काम के लिए निसार नहीं की जा सकती, क़ुर्बानियाँ यदि जाति-उत्थान के लिए नहीं की जा सकतीं, तो देश की उन्नति का नाम नहीं लेना चाहिए। रघ्घूमलजी, यह देश जातियों का ही तो समूह है। फिर इतनी जातियाँ हैं, खान-पान, रीति-रिवाज में इतने अन्तर हैं कि सब को मिला कर उन्नति करने का संघठन नहीं किया जा सकता।

सत्तूपरसाद—हाँ, इस देश की उन्नति का मार्ग ही यह है कि प्रत्येक जाति अपनी-अपनी उन्नति करे। उस जाति के पढ़े लिखे लोग उस उन्नति की दिशा निश्चित करें और उस दिशा में बढ़ने के लिए मार्ग।

मुलुआ—फिर, रघूमलजो, यहाँ तो हम तीन तीन जातियों के—कायस्थ, दूसर और नाई—तीन-तीन जातियों के तीन-तीन पढ़े लिखे युवक, जातिभक्त युवक, देशभक्त युवक इकट्ठे बैठ कर अपनी-अपनो जाति के उत्थान की बात सोच रहे हैं, अपने-अपने जीवन को इस महान और पवित्र कार्य के लिए उत्सर्ग करने का स्वप्न देख रहे हैं।

रघूमल--(विचार पूर्वक) हाँ, वह स्वप्न कहीं ख़्वाब ही न रह जाय, मैं यह सोच रहा हूँ।

सत्तूपरसाद—यह कदापि नहीं हो सकता। हममें से प्रत्येक अपनी-अपनी जाति की सर्वांगपूर्ण उन्नति की भावना रखता है। फिर एक पर एक ग्यारह, और एक, एकसोग्यारह होते हैं।

मुलुआ—(मुसकराते हुए) हाँ, हाँ, यदि हम तीन मिल कर कुछ नहीं कर सकते तो फिर संसार में कोई कुछ नहीं कर सकता।

रघूमल—(विचार पूर्वक अत्यन्त गंभीरता से) अच्छी बात है तो तब हुआ कि हम अपनी-अपनी ज़िन्दगी अपनी-अपनी जाति की तरक्क़ी के लिए निसार कर देंगे और इस काम में जितनी भी क़ुर्बानियाँ करनी होंगी उन्हें बख़ुशी करेंगे।

सत्तूपरसाद—प्रतिज्ञा का संकल्प कीजिए, रघूमलजी।

मुलुआ—(मुसकरा कर) हाँ, हाँ, यह ठीक है।

रघूमल—(मुसकरा कर) आप संकल्प बोलिए, सत्तूपरसादजी, मुलुआजी और मैं उसे दोहरायेंगे।

सत्तूपरसाद—अच्छी बात है। जल ले आता हूँ।

[सत्तूपरसाद दरवाज़े के बाहर जाता और एक-देहाती पीतल के लोटे में जल्दी से पानी लेकर आता है। तीनों अपने-अपने दाहने हाथों में जल लेते हैं।]

सत्तूपरसाद—कहिए—ॐ विष्णुः विष्णुः विष्णुः

रघूमल } मुलुआ } (एक साथ) ॐ विष्णुः विष्णुः विष्णुः

सत्तूपरसाद — ॐ अद्यैतस्य ब्रह्मणोहि

रघूमल } मुलुआ } ॐ अद्यैतस्य ब्रह्मणोहि

सत्तूपरसाद—द्वितीयप्रहरार्द्धे

रघूमल } मुलुआ } द्वितीयप्रहरार्द्धे

सत्तूपरसाद—श्रीश्वेतवाराहकल्पे

रघूमल } मुलुआ } श्रीश्वेतवाराहकल्पे

सत्तूपरसाद—जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्ते

रघूमल } मुलुआ } जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्ते

सत्तूपरसाद—कलियुगे कलिप्रथमचरणे

रघूमल } मुलुआ } कलियुगे कलिप्रथमचरणे

सत्तूपरसाद—पुण्यक्षेत्रे

रघूमल } मुलुआ } पुण्यक्षेत्रे

सत्तूपरसाद—विजयनामसंवत्सरे

रघूमल } मुलुआ } विजयनामसंवत्सरे

सत्तूपरसाद—श्रीसूर्यउत्तरायणे

रघूमल } मुलुआ } श्रीसूर्यउत्तरायणे

सत्तूपरसाद—वसन्तऋतौ

रघूमल } मुलुआ } वसन्तऋतौ

सत्तूपरसाद—चैत्रमासेशुभेशुक्लपक्षे

रघूमल }
मुलुआ } चैत्रमासेशुभेशुक्लपक्षे

सत्तूपरसाद—एकदश्यांतिथौ गुरुवासरे

रघूमल }
मुलुआ } एकादश्यांतिथौ गुरुवासरे

सत्तूपरसाद—अमुक गोत्रोत्पन्नो

मुलुआ—अमुक गोत्र ?

रघूमल—हाँ, भाई, गोत्र तो हमें अभी अपना-अपना बनाना होगा न ?

रघूमल }
मुलुआ } अमुकगोत्रोत्पन्नो

सत्तूपरसाद—अपना-अपना नाम लीजिए, सत्तूपरसादो...

रघूमल—भाई नाम इसी वक्त बदल लो, हमारे नाम अच्छे नहीं हैं।

मुलुआ—हाँ, यह ठीक है।

सत्तूपरसाद—ऐसा ? (कुछ सोच कर) अच्छी बात है, मैं अपना नाम सीताशरण रखता हूँ।

रघूमल—और मैं···(विचारकर) मैं रघुराजसिंह।

मुलुआ—सुन्दर। (विचार करते हुए) मैं···मैं···मैं मल्लिनाथ रख लेता हूँ।

सत्तूपरसाद—वाह ! वाह ! अच्छी खोज की। प्रसिद्ध टीकाकार (कुछ रुककर) अच्छा, अपना-अपना नाम लीजिए सीताशरणो हं

रघूमल—रघुराजसिंहो हं

मुलुआ—मल्लिनाथो हं

सीताशरण—अब वर्ण ।

रघुराजसिंह—यह बाद में तय करेंगे ।

मल्लिनाथ—हाँ, यह ठीक है ।

सीताशरण—स्वजातिउत्थान कर्यार्थ

रघुराजसिंह }
मल्लिनाथ } स्वजातिउत्थान कर्यार्थ

सीताशरण—स्वजीवनसमर्पण

रघुराजसिंह }
मल्लिनाथ } स्वजीवनसमर्पण

सीताशरण—करिष्ये ।

रघुराजसिंह }
मल्लिनाथ } करिष्ये ।

[तीनों जल छोड़ते हैं]

मल्लिनाथ—देखो तो, कैसा तो संवत्सर मिला—विजय, कैसा सूर्य मिला—उत्तरायण, कैसी ऋतु मिली—वसन्त, कैसी तिथि मिली—एकादशी, कैसा वार मिला—गुरु ।

सीताशरण—दैवी-प्रेरणा ; देखा, दैवी-प्रेरणा इसे कहते हैं । भगवान हमारे साथ हैं ।

रघुराजसिंह—अच्छे कामों में भगवान हमेशा मददगार रहते हैं । (कुछ रुककर) अच्छा, देखो, अब अपनी-अपनी जाति को कौन सी जाति बनाना है, यह तय करो ।

सीताशरण—याने ?

रघुराजसिंह—याने यह कि कायस्थ समझे जाते हैं शूद्र, दूसर समझे जाते हैं नीचे दरजे के बनिये और नाई को तो छूकर कई लोग नहाते हैं । अगर कायस्थ शूद्र बने रहे, दूसर बनिये और नाई अछूत, तो इन जातियों की तरक्की हो चुकी ।

सीताशरण—हाँ, यह तो ठीक है।

मल्लिनाथ—बिलकुल।

रघुराजसिंह—(विचार करते हुए) भाई मैं तो कायस्थों को क्षत्रिय बनाऊँगा। क्षत्रियों की ही इस वक्त मुल्क को सबसे ज़्यादा ज़रूरत है।

सीताशरण—और सच्चे ब्राह्मणों की उससे अधिक। जिस देश का सच्चा ज्ञान लुप्त हो जाता है, उसका उत्थान नहीं हो सकता। मैं दूसरों को ब्राह्मण बनाऊँगा।

मल्लिनाथ—मैं भी नाइयों को ब्राह्मण।

रघुराजसिंह—एक दम इतनी बड़ी छलाँग।

मल्लिनाथ—छलाँग ही मारना है तो फिर छोटी क्यों मारी जाय।

सीताशरण—और मेरी तो छलाँग उतनी ही है जितनी आपकी। आपने दो सीढ़ियाँ चढ़ीं—शूद्र से क्षत्रिय, मैंने भी दो सीढ़ियाँ चढ़ीं—वैश्य से ब्राह्मण।

[तीनों कुछ देर चुप रहते हैं]

रघुराजसिंह—देखो, सिर्फ़ कह देने से कि कायस्थ क्षत्रिय हैं, दूसर और नाई ब्राह्मण, काम न चलेगा, इसके लिए वेदों के, स्मृतियों के, शास्त्रों के, पुराणों के सुबूत देने होंगे, तब लोग मानेंगे।

सीताशरण—हिन्दुओं के लिए इसमें कोई कठिनाई नहीं हो सकती—इतने वेद, इतनी स्मृतियाँ, इतने शास्त्र, इतने पुराण हैं, और फिर श्लोक बना बनाकर उनमें इतना जोड़ा जा सकता है, कि किसी भी बात का प्रमाण मिल सकता है।

मल्लिनाथ—बहुत सरलता से, बहुत सरलता से।

रघुराजसिंह—फिर हमारी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी भी हमें उन्हीं जातियों के मानिंद बनानी होंगी, जिन जातियों के हम बन रहे हैं।

सीताशरण—अवश्य।

मल्लिनाथ—सर्वथा।

रघुराजसिंह—अपने-अपने गोत्र बनाने होंगे। अपनी-अपनी जाति की जाति सभाएँ क़ायम करनी होंगी। उन सभाओं के अख़बार निकालने होंगे। तक़रीरें करनी होंगी। शायरी लिखनी होगी। भाई, बहुत···बहुत काम है।

सीताशरण—सब हो जायगा।

मल्लिनाथ—हम लोग मिलते रहें, किस प्रकार काम बढ़ रहा है, इसकी आलोचना करते रहें, आगे का कार्यक्रम निश्चित करते रहें, आपकी सम्मति हमारी पथ-प्रदर्शक रहे, बस हो जायगा।

[कुछ देर फिर तीनों चुप रहते हैं]

रघुराजसिंह—अच्छा तो फिर अब आज तो···

[तीनों खड़े होते हैं।]

यवनिका

—:o:—

मुख्य दृश्य

स्थान—एक नगर के मकान में एक कमरा

समय—मध्याह्न

[कमरे की दीवालें कलई से पुती हैं। दीवालों में कई दरवाजे और खिड़कियाँ हैं, जिनके किवाड़ों में शीशे लगे हैं। छत से कई बिजली की बत्तियाँ और पंखे झूल रहे हैं। जमीन पर कालीन बिछा है, जिस पर बेश कीमती फरनीचर है। कुर्सियों पर रघुराजसिंह, सीताशरण और मल्लिनाथ बैठे हैं। तीनों की अवस्था देखने से जान पड़ता है कि उपक्रम की घटना को १०, १२ वर्ष बीत चुके हैं। तीनों की वेष-भूषा में बहुत परिवर्तन हो गया है। रघुराजसिंह अब बड़ा सा साफा बाँधे हैं। कोट की जगह शेरवानी है और सादे पायजामा की जगह चूड़ीदार पायजामा। शेरवानी में छाती पर बायीं ओर एक बड़ा लोहे का बैज लगा हुआ है, जिसमें भैंसे की मूर्ति बनी है। कमर में कमर-पट्टा है और उसमें तलवार के सदृश लंबी एक कलम लटक रही है। सीताशरण का सिर मुड़ा हुआ है, चोटी भी नहीं है और सिर पर कोई वस्त्र भी नहीं। शरीर पर केवल दुपट्टा और धोती है। वक्षस्थल पर मोटा यज्ञोपवीत दिखायी देता है। मल्लिनाथ का सिर भी खुला है। उसके सिर पर गोखुर के सदृश चोटी शिखा है। शरीर के ऊपर का भाग नंगा है और नीचे के भाग में धोती। यज्ञोपवीत वह भी धारण किये हैं, पर यज्ञोपवीत में एक बड़ा सा अस्तुरा बँधा है। रघुराजसिंह के ललाट पर रामनंदी तिलक, सीताशरण के त्रिपुण्ड और मल्लिनाथ के सिन्दुर का बिन्दु लगा है।]

रघुराजसिंह—हाँ, उस संकल्प को एक युग, बारह साल का पूरा एक युग ख़त्म हो गया। आज चैत के उजले पखवाड़े की एकादशी है। आज ही के दिन, बारह साल पहले, हमने अपनी-अपनी जाति की तरक्की के लिए संकल्प किये थे।

सीताशरण—और गत बारह वर्षों में क्या हुआ, इसकी आलोचना यद्यपि हम समय-समय पर कर, आगे के कार्य का कार्यक्रम तैयार करते रहे हैं तथापि युग-समाप्ति पर हमें अपनी समस्त कार्यवाही का सिंहावलोकन कर लेना चाहिए।

मल्लिनाथ—अवश्य, जिससे आगे का कार्यक्रम और भी व्यवस्थित हो सके।

सीताशरण—(रघुराजसिंह से) आप ही आरंभ करें, सिन्हा साहब।

रघुराजसिंह—मैं ही शुरू करूँ ? (कुछ रुककर) अच्छी बात है। पण्डितो! कायस्थ जाति ने इस एक युग में अज़हद तरक्क़ी की है। वेदों, स्मृतियों, शास्त्रों और पुराणों से यह तय पा गया कि कायस्थ शूद्र न हो कर क्षत्रिय हैं। कायस्थों की पैदायश यमपुरी के बादशाह चित्रगुप्त से हुई है। चित्रगुप्त यमपुरी के तेरहवें बादशाह थे। शूद्र तो ब्रह्मा के पैरों से पैदा हुए थे, लेकिन शास्त्र कहते हैं चित्रगुप्त ब्रह्मा के तमाम बदन से। दुनियाँ की सबसे पुरानी किताब ऋगवेद में जैसे अग्नि, वायु, इन्द्र, वरुण वगैरह के लिए देव सूक्त, हैं, उसी तरह चित्रगुप्त के लिए।

ऋगवेद कहता है—(हाथ हिलाकर गाते हुए)

> **'सचित्र चित्रं चितयन्तमस्मे चित्र क्षत्रं**
> **चित्र तमंवयोधाम चन्द्र रयि पुरुवीरं**
> **वृहन्तं चन्द्रचन्द्राभिगृणते युवस्व'**

इस पर आश्वलायन ने श्रौत सूत्र में कहा है—

(फिर हाथ हिलाकर गाते हुए)

'सचित्र चित्रं चितयन्तमस्मे अग्निरोशेबृहतः क्षत्रियस्य'.

यजुर्वेद शतपथ ब्राह्मण में लिखा है—(फिर हाथ हिला कर गाते हुए)

'यान्येतान देवत्रा क्षत्राणीन्द्रो वरुणः
सोमो रुद्रः पर्जन्यो यमः

वगैरह वगैरह

सीताशरण—वाह ! वाह ! वाह ! वाह ! एक नहीं, दो दो वेदों के प्रमाण हैं।

मल्लिनाथ—अकाट्य प्रमाण ! अकाट्य प्रमाण !

रघुराजसिंह—सिर्फ़ वेदों में नहीं, वेदों में, ब्राह्मण ग्रन्थों में, फिर स्मृतियों में उसके बाद पुराणों में सिलसिलेवार सुबूत हैं कि चित्रगुप्त ब्रह्मा के तमाम बदन से पैदा हुए। यमपुरी के वे तेरहवें और आख़िरी बादशाह थे। वे क्षत्रिय थे और कायस्थ जाति के वे सबसे पहले बुज़ुर्ग। एक शायर ने इस तमाम क़िस्से पर बड़ी अच्छी शायरी की है। हमारे बुज़ुर्ग बादशाह चित्रगुप्त के मुताल्लिक वह कहता है—(गाता है।)

'श्यामल अंग पितांबर शोभित
भाल विशाल त्रिपुण्ड्र भ्राजे।
दीर्घ भुजा सुठि लोचन आनन
नासिका चारु महा छवि छाजे॥
कानन भूषण लेखनि पट्टिका
हाथ खरी मसि भाजन साजे
रूप विलोकि विरंच थके
पद पावन सुन्दर पद्म विराजे॥'

सीताशरण—वाह ! वाह ! वाह ! वाह ! सुन्दर सवैया है।

मल्लिनाथ—कितनी सुन्दर भाषा और कितने सुन्दर भाव हैं। हाँ, ब्रज भाषा का अब प्रचार कम हो चला है, इस लिए इसकी टीका करनी होगी।

सीताशरण—(मुसकरा कर) आपका नाम ही मल्लिनाथ है।

रघुराजसिंह—ऐसे फर्ज़न्द को पाकर ब्रह्माजी बहुत ख़ुश हुए। उन्होंने कहा तुम मेरी काया में पोशीदा रहे हो इस लिए तुम्हारा नाम होगा—चित्रगुप्त। और फिर तुम मेरी काया से ही पैदा हुए हो इसलिए तुम्हारी जाति होगी—कायस्थ। इस दुनिया में कुछ कर सको इसके लिए तुम कोट नगर में जाकर, जिसे आजकल उज्जैन कहते हैं, चण्ड मुण्ड नाशिनी चण्डिका देवी का नमाज़ पढ़ो। वालिद ब्रह्मा का हुक्म पाकर चित्रगुप्त कोट नगर गये और वहाँ उन्होंने बारह हज़ार साल तक, सुना बारह हज़ार साल...

सीताशरण—थोड़ी सी तपस्या से उन्हें इतनी बड़ी चढ़ी शक्ति थोड़े ही मिल सकती थी।

मल्लिनाथ—कदापि नहीं, कदापि नहीं।

रघुराजसिंह—बारह हज़ार साल तक तपस्या की और चण्डिका देवी का नमाज़ पढ़ा। देवी ख़ुश हो गयी। शेर पर बैठ कर पैदा हुई, शेर पर...

सीताशरण—हाँ, हाँ, शक्ति देने के लिए शक्तिशाली वाहन पर बैठकर तो प्रकट होती ही।

मल्लिनाथ—अवश्य, अवश्य।

रघुराजसिंह—देवी बोली मैं तुमसे बहुत ख़ुश हो गयी हूँ। (गाकर)

'सन्तति सम्पति आयु बहु पर उपकारहि लीन।
हुइ हौ भागी सुयश के लेखकि कला प्रवीन॥'

देवी की ख़ुशी में अपनी भी ख़ुशी शामिल कर देने के लिए फिर तो वहीं ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी पैदा हुए। शायर कहता है—(गाकर)

'विधि हरि हर हर्षित भये सुनि दुर्गा के बैन।
तीनहुँ लागे मुदित मन चित्रगुप्त वर दैन॥'

ब्रह्मा बोले—(गाकर)

'धर्मराज ढिग तुम रहहु करहु सहाय सुजान।
बारह यम के बीच मँह तुम हो मुख्य प्रधान।'

विष्णु बोले—(गाकर)

'आहुति देवन संग नित पैहो अति हरषाय।
कर्म शुभाशुभ जीव के सदा लिखहु बिलगाय॥'

महेश बोले—(गाकर)

'जगत पूज्य गुण आगरे अजर अमर गुण खान।
तुम सेवत पै हैं सकल सुत वित यश कल्याण॥'

सीताशरण—धन्य है! धन्य है!

मल्लिनाथ—चित्रगुप्त महाराज की जय!

रघुराजसिंह—अब चित्रगुप्त ने यमपुरी आकर अपनी बादशाहत सँभाली। लेकिन शादी की भी तो—ज़रूरत थी।

सीताशरण—अवश्य। बिना विवाह के कभी धर्म पालन हो सकता है।

मल्लिनाथ—कदापि नहीं, कदापि नहीं।

रघुराजसिंह—विवस्वान मनु के दो शाहज़ादे हुए—श्राद्धदेव और धर्मशर्मा। श्राद्धदेव के सात शाहज़ादे और एक शाहज़ादी हुईं, लेकिन धर्मशर्मा के सिर्फ़ एक शाहज़ादी ही। श्राद्धदेव की शाहज़ादी का नाम था—नंदिनी और धर्मशर्मा की शाहज़ादी के दो नाम थे—ऐरावती और—शुभावती। महादेव के हुक्म से इन दोनों, शाहज़ादियों की शादी बादशाह चित्रगुप्त से हुई। बादशाह चित्रगुप्त के आठ फ़र्ज़न्द बेगम शुभावती और चार बेगम नंदिनी से हुए। शायर कहता है—(गाकर)

'भये सकल सुत आनँद राशी।
जनु रवि द्वादश कला प्रकाशी॥

चित्रगुप्त अति आनँद पाये।
घर-घर मंगल बजत बधाये॥'

सीताशरण—बधाई है ! बधाई है !

मल्लिनाथ—बधाई है ! बधाई है !

रघुराजसिंह—इन बारहों फ़र्ज़न्दों की शादियाँ बादशाह चित्रगुप्त ने बारह नाग कन्याओं से की। अपनी अपनी बेगमों के साथ चित्रगुप्त महाराज के ये बारह फ़र्ज़न्द हिन्दुस्तान की अलग-अलग जगहों में रहने के लिए आये और सबने अपने इष्ट के नमाज़ के साथ अपने-अपने फ़र्ज़ों को अदा करना शुरू किया। शायर कहता है—(गाकर)

'माथुर, गौड़, कर्ण भटनागर।
वालमीक, अम्बष्ट उजागर॥
सक्सेना, अष्ठानहिं मानो।
शुभावती के सुत ये जानो॥
निगम, सूरध्वज जग जाने।
श्रीवास्तव, कुलश्रेष्ठ बखाने॥
ये सुत चार नन्दनी जाये।
सब मिल द्वादश बन्धु कहाये॥'

सीताशरण—इस प्रकार कायस्थों के बारह विभाग हुए ?

मल्लिनाथ—महान विभाग ! महान विभाग !

रघुराजसिंह—हाँ, पंडितो, कायस्थ जाति ने अपने पहले बुज़ुर्ग को पहचान लिया है। अपने बारह फ़िर्क़ों को जान लिया है। उसे मालूम हो गया है कि वह शूद्र नहीं, लेकिन सच्ची क्षत्रिय जाति है। उसने अपनी जाति-सभा क़ायम कर ली है। जाति सभा का अख़बार निकलने लगा है। हर साल जाति की सभा के जलसे होते हैं, जिसमें जाति की तरक्क़ी के लिए रज़ोल्यूशनों के बंडल पास किये जाते हैं और उन पर आँधी के मानिंद धुआँधार तक़रीरें होती हैं। हर कायस्थ के मकान में अब

फिर से सोलह संस्कार होने लगे हैं, उनको उनके गोत्र भी मालूम हो गये हैं। चित्रगुप्त बादशाह की सवारी भैंसा होने के सबब हमने अपना बैज भैंसे की शक्ल का बनाया है और उनका सच्चा हथियार कलम होने की वजह से हम लोग कमर में तलवार की जगह क़लम बांधते हैं। राजा रामचन्द्र जी क्षत्रिय थे इसलिए पेशानी पर हम लोग रामानंदी तिलक लगाते हैं। बारह सालों का यह युग कायस्थ जाति की तवारीख़ में सतयुग के नाम से सुनहले हरफ़ों में लिखा जायगा। इसी तवारीख़ को लिखने के लिए चित्रगुप्तेश्वर पुराण बनाये जाने का इन्तज़ाम हो रहा है।

मल्लिनाथ—बोलो महाराज चित्रगुप्त की जय !

सीताशरण—सच्ची आर्य क्षत्रिय जाति कायस्थ की जय !

[कुछ देर निस्तब्धता रहती है]

रघुराजसिंह—(सीताशरण से) अच्छा, पण्डितजी, आपकी जाति ने इस एक युग में क्या किया उसका हाल आप फ़रमाइए।

सीताशरण—बहुत अच्छा; सुनिए। हमारी जाति को मालूम हो गया है कि 'धूसर' शब्द संस्कृत के बधूसर शब्द का अपभ्रंश है। यथार्थ में हमारी जाति ऋगवेद में वर्णित महर्षि भृगु से उत्पन्न हुई है और उसका प्राचीन नाम 'बधूसर-भार्गव' है। भृगु-वंश ब्राह्मण वर्ण में प्राचीनतम है। ऋगवेद में 'भृगु' तथा बहुवचन 'भृगवः' अनेक स्थलों पर आया है। वैदिक साहित्य में महर्षि भृगु को 'वारुण' अर्थात् वरुण का पुत्र कहा गया है। उनका इतना बड़ा महत्त्व था कि भगवान श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं—'महर्षीणां भृगुरह'। महर्षि भृगु के दो पत्नियाँ थीं। पहली का नाम था—पौलोमा। पौलोमा के गर्भ में जब च्यवन ऋषि थे उस समय महर्षि भृगु की अनुपस्थिति में एक दिन एक दैत्य उन्हें हरण कर ले गया। शोक तथा भय के कारण उनका गर्भपात हो गया और शिशु पृथ्वी पर गिर पड़ा, इसीलिए वह 'च्यवन' अर्थात् 'गिरा हुआ' कहा गया। उस शिशु के सूर्य सदृश तेज से वह दैत्य भस्म हो

गया। पौलोमा जब रोती हुई शिशु को उठा महर्षि भृगु के आश्रम को लौटीं तब उनकी अश्रु धारा से एक नदी बह चली जिसका नाम ब्रह्मा ने 'बधूसरा' रखा। आगे चल इसी के किनारे च्यवन ऋषि ने अपना आश्रम बनाया। वर्तमान समय के रिवाड़ी फुलेरा कार्ड रेलवे पर बसी नारनौल नगरी से लगभग पाँच मील पश्चिम की ओर यह च्यवनाश्रम था। इसके किनारे आज भी बधूसरा नदी बहती है और उसी के पास एक गाँव है जिसका नाम 'बधूसरी' है।

रघुराजसिंह—च्यवन ऋषि के आश्रम का पता लग गया है!

सीताशरण—जी सिन्हा साहब, और पते के कई प्रमाण हैं।

मल्लिनाथ—अच्छा!

सीताशरण—देखिए पहला प्रमाण है—च्यवन गुफा' दूसरा प्रमाण है 'च्यवन कुंड' और तीसरा प्रमाण है एक मन्दिर, जिसमें च्यवन ऋषि की मूर्ति स्थापित है।

रघुराजसिंह—वाह! वाह! इससे बड़े और क्या सुबूत हो सकते हैं?

मल्लिनाथ—अकाट्य प्रमाण! अकाट्य प्रमाण!

सीताशरण—महर्षि च्यवन का विवाह पुराणों में वर्णित राजा शर्याति की राजकुमारी सुकन्या से हुआ; परन्तु तपस्या करते-करते च्यवन ऋषि वृद्ध हो गये थे। देवताओं के राजवैद्य अश्विनी-कुमार ने आकर औषधियों के जल का एक कुंड बनाया। उसमें स्नान कर महर्षि च्यवन पुनः युवा हुए। वही कुंड आज इस आश्रम के निकट 'च्यवन कुंड', 'बधूसर कुंड' 'सिद्धकुंड' इत्यादि के नामों से विख्यात है। च्यवन ऋषि के युवा होने के पश्चात् राजकुमारी सुकन्या से उनको जो संतति हुई वह 'बधूसरा' नदी के तट पर 'बधूसरी' बस्ती में रहने लगी। धीरे धीरे बधूसरा नदी धूसरा नदी और 'बधूसरी' बस्ती ढोसी गाँव कहलाने लगा। यह सन्तति पहले 'बधूसर भार्गव' कहलायी और भाषा के बिगाड़ के कारण जिस

प्रकार 'बधूसरा नदी' 'धूसरा' और 'बधूसरी' बस्ती ढोसी गाँव कहलाया उसी प्रकार 'बधूसर भार्गव' को लोग पहले 'धूसर' और फिर 'हूसर' कहने लगे।

मल्लिनाथ—अनर्थ है, घोर अनर्थ ! श्रेष्ठतम ब्राह्मण, महर्षि भृगु के पुत्र, महर्षि च्यवन की संतति बधूसर-भार्गव-जाति निम्न कोटि के बनिए !

रघुराजसिंह—तभी तो इस मुल्क की यह हालत हो गयी।

सीताशरण—एक कवि ने हमारी जाति का सुन्दर वर्णन किया है, सिन्हा साहब, पंडित जी।

रघुराजसिंह—फ़र्माइए, फ़र्माइए।

मल्लिनाथ—हाँ, हाँ, अवश्य, अवश्य सुनाइए।

सीताशरण—कवि कहता है—(गाता है।)

'परम तपस्वी ऋषि जो कहिए।
च्यवन नाम पुनि तिन को लहिए॥
पुनि ऋषि की संतान भई जो।
तिनको हूसर कहिए तहँ सो॥
ढोसीपुर में बास जो पायो।
तासों हूसर नाम कहायो॥'

मल्लिनाथ—सुन्दर वर्णन है। भाषा तो इतनी सरल है कि इसकी टीका की आवश्यकता नहीं।

सीताशरण—इस प्रकार के भार्गव मूल गोत्र में ७ गण, १२ पक्ष और ८३९ वर्ग या शाखा गोत्र हैं। वर्तमान काल में इनमें कितने ही हैं और कितने ही नष्ट भी हो गये हैं। वे समस्त भारतवर्ष के ब्राह्मणों के भिन्न भिन्न भेदों और उपभेदों में फैले हुए हैं, जिनके साथ यद्यपि आज बधूसर भार्गवों का कोई संबंध नहीं तथापि वस्तुतः वे उनके सगोत्री बन्धु हैं।

मल्लिनाथ—उँह ! संबंध आज नहीं है तो क्या हुआ, हो जायगा।

रघुराजसिंह—बेशक, बहुत जल्दी।

सीताशरण—बधूसर भार्गवों के ७½ गोत्र हैं। उनका वेद शुक्ल यजुर्वेद, शाखा माध्यंदिन, उपवेद धनुर्वेद, श्रौत्रसूत्र कात्यायन, गृहसूत्र पारस्कर प्राचीन समयाचारिक या धर्म सूत्र कात्यायन, कुल देवता वरुण, देवियाँ शकरा आदि १८ हैं।

रघुराजसिंह—ओहो ! आपने तो बड़ी बारीकी से खोज की है।

मल्लिनाथ—अवश्य।

सीताशरण—उनमें शिखा के संबंध में एक बड़ी विचित्र बात मिली है।

रघुराजसिंह—कैसी ?

सीताशरण—गोभिलय गृह्य संग्रह परिशिष्ट में कहा है—

'दक्षिण कपर्दा वासिष्ठाः आत्रेयास्त्रि कपर्दिनः।
आंगिरसः पंचचूड़ा मुण्डा भृगवः शिखिनोऽन्यो।'

रघुराजसिंह—इसीलिए आपने चोटी मुड़ा दी है।

मल्लिनाथ—जातिभक्तों को तो शास्त्रों के वचनानुसार ही रहना चाहिए।

सीताशरण—ऐसे प्राचीन 'बधूसर भार्गव आगे चलकर भी अपना उत्कर्ष रख सके। महाराजा जन्मेजय के राज्य काल में वे ही कुरुदेश के राजाओं के पुरोहित थे। उज्जैनी के महाराजा विक्रमादित्य के भी वे पुरोहित बने। महाराजा पृथ्वीराज के वे ही पुरोहित रहे।

मल्लिनाथ—धन्य है ! धन्य है !

सीताशरण—और फिर एक बात तो देखिए। जब विदेशी मुसलमानों ने भारत पर आक्रमण किया तब उन्होंने देश की रक्षा के लिए ब्राह्मण वृत्ति छोड़कर क्षात्र धर्म स्वीकार कर लिया और इस संबंध में उनका पूर्णोत्कर्ष हुआ महाराजा हेमू विक्रमादित्य के समय।

रघुराजसिंह—हाँ, हाँ, यह तो तवारीख़ की मशहूर बात है। बदायूनी तक ने हेमू के मुताल्लिक लिखा है।

सीताशरण—सिन्हाँ साहब, हेमू बधूसर भार्गव ही थे। उन्होंने दिल्ली को जीता था। दिल्ली जीत कर उन्होंने विक्रमादित्य की उपाधि ग्रहण की थी और इस प्रकार वे अन्तिम हिन्दू सम्राट् माने जाने चाहिए। वह तो उनके सेना-नायकों ने उन्हें धोखा दिया नहीं तो इस देश पर से विदेशियों की सत्ता का अंत हो ही गया था।

मल्लिनाथ—बोलो महाराजाधिराज राजराजेश्वर सम्राट् हेमू विक्रमादित्य की जय!

सीताशरण—वही परम पवित्र और परम प्रतापी बधूसर भार्गव जाति आज निम्नतम बनियों की जाति समझी जाती है, परन्तु सत्य सदा छिप नहीं सकता। उसने अपनी प्राचीन उत्पत्ति तथा प्राचीन इतिहास को जान लिया है। भार्गव महासभा की स्थापना हो गयी है। प्रतिवर्ष उसके अधिवेशन धूम धाम से हो रहे हैं। इन अधिवेशनों में जाति-सुधार पर विचार किया जाता है। नाना प्रकार के प्रस्ताव पास होते हैं। उन पर धारावाहिक भाषण दिये जाते हैं। भार्गवों में पुनः षोडश संस्कार होने लगे हैं। इन बारह वर्षों के एक युग में जो कुछ किया गया है वह इस जाति के पुनरुत्थान के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जायगा। वह समय बहुत निकट है, सिन्हाँ साहब, पंडित जी, जब यह जाति भारतवर्ष के ब्राह्मणों में पुनः अग्रगण्य हो भारतवर्ष को सच्चे ज्ञान का प्रकाश दिखलाने में समर्थ हो सकेगी। इस समय देश को सच्चे ज्ञान की ही सबसे अधिक आवश्यकता है।

मल्लिनाथ—बोलो भार्गव जाति की जय!

[कुछ देर निस्तब्धता।]

रघुराजसिंह—(मल्लिनाथ से) अच्छा, पंडित जी, अब आप अपनी जाति की तरक्क़ी का हाल बताइए।

मल्लिनाथ—(गला साफ़ करते हुए) हमारी जाति उत्थान के उस शिखर पर तो अब तक नहीं पहुँच सकी है, जिस पर आप लोगों की जातियाँ इस युग में ही पहुँच गयीं, किन्तु उत्कर्ष का कार्य आरंभ अच्छी प्रकार हो गया है, इसमें सन्देह नहीं किया जा सकता।

रघुराजसिंह—हाँ, इसमें तो क्या शक हो सकता है ?

मल्लिनाथ—हम लोगों ने सबसे पहले तो अपनी जाति के नाम में ही संशोधन किया। पाणिनी के व्याकरण के अनुसार 'नाई' शब्द का कोई अर्थ ही नहीं निकलता था।

सीताशरण—सर्वथा नहीं।

मल्लिनाथ—और निरर्थक शब्द संस्कृत के सदृश भाषा में हो नहीं सकता।

सीताशरण—कदापि नहीं।

मल्लिनाथ—हमने 'नाई' शब्द का 'न्यायी' शुद्ध रूप बना दिया।

रघुराजसिंह—बिलकुल ठीक, लफ़्ज़ में इतना रद्दोबदल तो आसानी से हो सकता है।

सीताशरण—' न्यायी ' शब्द ही बिगड़ कर ' नाई ' बन गया है, इसमें सन्देह का स्थान ही नहीं।

मल्लिनाथ—फिर हमने अपने आदि पुरुष नाभिक को ढूँढ़ निकाला और जब पीढ़ियों का मिलान किया तो स्पष्ट हो गया कि नाभिक विष्णु जी का भाई था।

रघुराजसिंह—जब यह पता लग गया, तब तो फिर इसके दूसरे सुबूतों की जरूरत ही नहीं रह सकती कि नाई दर असल न्यायी ब्राह्मण है, क्योंकि विष्णु तो शूद्र होने से रहा।

सीताशरण—बिल्कुल ठीक है।

मल्लिनाथ—इसके पश्चात् हमने क्षौर कर्म किस जाति का कर्म है इसका पता लगाया और हमें अथर्व वेद में लिखा मिल गया—'तेन ब्राह्मणो वपत्' अर्थात् उस्तरे से ब्राह्मण लोग क्षौर करें; अतएव क्षौर कर्म ब्राह्मण-कर्म है।

रघुराजसिंह—वाह! वाह! वाह! वाह! अथर्व वेद के सूत्र से ज़्यादा बड़ा सुबूत और कहाँ मिल सकता है।

मल्लिनाथ—इसीलिए, सिन्हा साहब, पण्डित जी, उस्तरे को हम लोगों ने यज्ञोपवीत के साथ यज्ञोपवीत में बाँधना आरंभ किया है। (अपनी यज्ञोपवीत में बाँधे हुए उस्तरे को दिखा कर) इस प्रकार।

रघुराजसिंह—(विचार करते हुए) यह तो ठीक है, लेकिन इससे... इससे किसी वक़्त एक्सीडेंट का डर है।

मल्लिनाथ—नहीं, नहीं हम लोग ऐसे उस्तरे बाँधते हैं, जिनमें धार नहीं रहती। और फिर रात को सोने के समय यज्ञोपवीत सहित उसे खूँटे पर टाँग देते हैं।

रघुराजसिंह—तब...तब ठीक है; तब कोई हर्ज़ नहीं।

मल्लिनाथ—हमारी सभा 'न्यायी ब्राह्मण सभा' के नाम से स्थापित हो गयी है। हमारी जाति में भी यज्ञोपवीत होने लगे हैं। हमारे एक कवि ने हमारी सारी कथा पर सुन्दर कविता की रचना भी की है।

सीताशरण—अवश्य सुनाइए। अवश्य सुनाइए।

रघुराजसिंह—ज़रूर, ज़रूर।

मल्लिनाथ—भाषा की ओर ध्यान न दीजिएगा; वह तो ऐसी है जिसे हमारी जाति के लोग अच्छी प्रकार समझ लें। भावों पर लक्ष्य रखिए। कवि कहता है—(गाता है।)

'एक समय की बात को सुनलो पंच सुजान।
महादेव कैलाश पर समझाते थे ज्ञान॥

एक समय श्रीमहादेव ने पर्वत कैलास पर पंचायत किया।
सब देवता बुलवाये गये और अच्छे अच्छे राय दिया॥

नाई जन्म कहाँ से पाई सुनो सब जगत के भाई।
शिव के पुत्र भये विष्णु नाभिक जिनके भाई॥
विष्णु का पोता ब्रह्मा जानो नाभिक बेटा नाई।
इसी हिसाब से जोड़ लगाया नाई के ब्रह्मा भाई॥
नाई नाई सब कहैं, नाई हैगा कौन?
नाभिक ब्रह्मा ने कही शंकर जी के भौन?

हे भाइयो, फिर पूर्वजों के तुल्य तुम ज्ञानी बनो।
भूलो न अनुपम आत्म गौरव धर्म के ध्यानी बनो॥
कर दो चकित फिर विश्व को अपने पवित्र प्रकाश से।
मिट जाय सारा तम तुम्हारी जाति के आकाश से॥
विद्या भूषण तजा तुम्हीं ने किसको दोष जमाने में।
किया बहाना यजमानी का सभा आपनी आने में॥
आज समझ कर मूरख तुमको चिलमें लोग भराते हैं।
यज्ञ यपन का कर्म तुम्हारा धर्म शास्त्र बतलाते हैं॥
कहो भाइयो अब कुछ समझे कैसी कथा सुनाई।
तौर कर्म की महिमा देखो वेदों ने जो गाई॥

धीरे धीरे यवनिका

—:०:—

उपसंहार

स्थान—एक नगर के मकान में एक कमरा

समय—सन्ध्या

[दृश्य वैसा ही जैसा मुख्य दृश्य में था। अन्तर इतना ही है कि दीवाल और किवाड़ इत्यादि मैले हो गये हैं। फरनीचर बेमरम्मत है। क़ालीन इधर उधर से फट गया है। बिजली की बत्तियों के शेड और पंखों पर गर्द है। कुछ बत्तियों में लट्टू भी नहीं है। रघुराजसिंह, सीताशरण और मल्लिनाथ कुर्सियों पर बैठे हुए हैं। उनकी अवस्था से जान पड़ता है कि मुख्य दृश्य की घटना को दस बारह वर्ष बीत चुके होंगे। तीनों के काले बालों में सफ़ेदी आ रही है। वेष-भूषा तीनों की मुख्य दृश्य के सदृश है, मुख पर हतोत्साह हैं।]

सीताशरण—आज हमारे संकल्प के दूसरे युग का अंत होता है। इस युग का वृत्त बताइए, सिन्हा साहब।

रघुराजसिंह—अकेले में तो हम लोगों को एक दूसरे के सामने सच्ची हालत पेश करनी चाहिए।

मल्लिनाथ—इसमें क्या संदेह है।

रघुराजसिंह—तो मुझे तो अफ़सोस के साथ कहना पड़ता है कि इस युग में हमारी कायस्थ जाति ने वैसी तरक्की नहीं की जैसी पहले युग में की थी।

सीताशरण—हमारी भार्गव जाति की भी यही दशा है, सिन्हा साहब।

मल्लिनाथ—और हमारी न्यायी जाति की तो उससे भी बुरी। हर एक कायस्थ अपने को तो क्षत्रिय मानता है, चाहे दूसरे उसे क्षत्रिय न

मानें, प्रत्येक भार्गव अपने को ब्राह्मण मानता है, चाहे दूसरे ब्राह्मण उसे ब्राह्मण न मानें, पर हमारी जाति के न्यायी भाइयों में तो अधिकांश न्यायी भाई ही अपने को ब्राह्मण नहीं मानते। इतना ही नहीं, कुछ जब यज्ञोपवीत पहन-पहन कर क्षौर कर्म करने गये और हजामत बनवाने वालों ने कहा कि हम ब्राह्मणों से हजामत न बनवायेंगे तब उन्होंने अपने अपने यज्ञोपवीतों को उतार दियासलाई की डिबियों में बन्द करके रख लिया है। शायद सभा में ही पहन कर आयेंगे।

[तीनों कुछ देर चुप रहते हैं। निस्तब्धता रहती है।]

रघुराजसिंह—बात यह है कि इस वक्त मुल्क बिलकुल ही ग़लत और बहके हुए रास्ते पर चल रहा है। गान्धी ने 'स्वराज्य स्वराज्य' चिल्ला चिल्ला कर यहाँ के लोगों को और किसी काम का ही नहीं रखा। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सब एक हो जाओ, अछूत तक मिल जाओ, इस तरह की वाहियात बातें कही जा रही हैं। हिन्दू-मुसलमान भी मिल कर एक हिन्दुस्तानी जाति बनाओ, यह हल्ला मचा हुआ है। कुछ दिन में कहा जायगा तमाम दुनियाँ की आदमी जाति की एक जाति क़ायम करो। बेवकूफ़ी की भी कोई इंतहा है।

सीताशरण—आप बिल्कुल ठीक कह रहे हैं, सिन्हा साहब। देखिए न, जाति सभाओं के अधिवेशन तक में कोई नहीं आते।

[कुछ देर फिर निस्तब्धता।]

रघुराजसिंह—इस हालत में भी तब्दीली होगी, ज़रूर होगी।

सीताशरण—इसमें कोई सन्देह नहीं है!

रघुराजसिंह—बस थोड़ा सब्र रखना चाहिए, गाँधी की आँधी निकल जाने दीजिए, फिर सब ठीक हो जायगा।

सीताशरण—धैर्य्य का फल सदा मीठा होता है।

मल्लिनाथ—(विचारते हुए) परन्तु ..परन्तु...जहाँ तक नाइयों का सम्बन्ध है, वे...वे तो कभी भी इसे न मानेंगे कि वे न्यायी ब्राह्मण हैं। इसीलिए...इसीलिए, सिन्हाँ साहब, पंडित जी, मैंने तो एक दूसरी ही संस्था के पास सदस्य होने के लिए प्रार्थना-पत्र भेजा है।

सीताशरण—किस संस्था के पास, पंडित जी!

रघुराजसिंह—हाँ, किस जमात के पास, पंडित जी!

मल्लिनाथ—(गला साफ़ करते हुए) जाति पाँति...जाति-पाँति तोड़क मण्डल के पास।

सीताशरण—(चिल्ला कर) जाति-पाँति-तोड़क-मण्डल के पास!

रघुराजसिंह—(चिल्ला कर) जाति-पाँति-तोड़क-मण्डल के पास!

[रघुराजसिंह और सीताशरण मल्लिनाथ की ओर घूर कर देखते हैं। मल्लिनाथ दोनों की ओर न देख दूसरी ही तरफ़ देखने लगता है।]

यवनिका

समाप्त

—:०:—

निर्माण का आनंद

पात्र, स्थान

पात्र

डाक्टर ज्ञानप्रकाश—एक प्रोफ़ेसर

निर्मलचन्द्र—एक विद्यार्थी

प्रकाशवती—एक विद्यार्थी

स्थान

एक नगर

पहला दृश्य

स्थान—प्रकाशवती का कमरा

समय—संध्या

[कमरे की दीवालें कलई से पुती हैं। दीवालों में कई दरवाज़े और खिड़कियाँ हैं। छत से बिजली की दो बत्तियाँ झूल रही है। ज़मीन पर दरी बिछी है और उस पर है साधारण फ़रनीचर। राइटिंग-टेबिल की कुर्सी पर प्रकाशवती बैठी हुई एक नोट-बुक में कुछ लिख रही है। प्रकाशवती की अवस्था लगभग बाइस वर्ष की है। वह गौर वर्ण की अत्यन्त सुन्दर स्त्री है। फ़ीरोज़ी रंग की रेशमी साड़ी और उसी तरह का शलूका पहने है; थोड़े से हल्के आभूषण भी हैं। पैर में वह ऊँची एँडी के जूते पहने है। उसी के पास निर्मलचन्द्र खड़ा हुआ, जो कुछ प्रकाशवती लिख रही है, उसे ध्यान से देख रहा है। निर्मलचन्द्र की उम्र करीब चौबीस साल की है। वह भी सुन्दर युवक है। उसके कपड़े अँग्रेज़ी ढँग के हैं। कुछ देर निस्तब्धता रहती है।]

प्रकाशवती—(लिखना पूरा कर) पढ़ लिया? अभी भी समझ में आया या नहीं?

निर्मलचन्द्र—हाँ, अब तो बहुत कुछ समझ गया।

[प्रकाशवती उस कुर्सी पर से उठ नोट-बुक निर्मलचन्द्र को देती और आराम कुर्सी पर बैठ जाती है। निर्मलचन्द्र नोट-बुक को ले प्रकाशवती के निकट की दूसरी कुर्सी पर बैठ जाता है। प्रकाशवती सामने की तरफ़ शून्य में देखती है और निर्मलचन्द्र प्रकाशवती की ओर। दोनों कुछ देर चुप रहते हैं।]

निर्मलचन्द्र—आज कल मैं देखता हूँ कि मैं तुम्हें बहुत कष्ट देने लगा हूँ।

प्रकाशवती—(रुखाई से) नहीं तो।

निर्मलचन्द्र—नहीं कैसे ! एक इसी सवाल पर तुमको कितनी तकलीफ़ दी। तुम झुँझला तक पड़ीं।

प्रकाशवती—मैं झुँझला पड़ी ! कभी-कभी तुम्हारा दिमाग न जाने कहाँ चला जाता है कि तुम साधारण से साधारण बात नहीं समझते। मैं क्या कोई भी झुँझला पड़ेगा।

निर्मलचन्द्र—(लम्बी साँस लेकर) मेरा दिमाग़ तो सदा ऐसा ही रहा है, प्रकाश, मेट्रिक के बाद से ही तुम्हारा साथ है। इन्टर में तुम्हीं ने कोच किया, बी० ए० में तुम्हीं ने। मैं तो मानता हूँ तुम्हारे कारण ही मैं पास हुआ। तुम्हीं ने मेरा निर्माण किया है। एम० ए० भी तुम्हारे कोचिंग से ही पास हो सकूँगा, पर, प्रकाश, पहले तुम इस तरह झुँझलाती नहीं थी।

प्रकाशवती—अब झुँझलाने लगी हूँ ?

निर्मलचन्द्र—अवश्य, पर झुँझलाओ, जो चाहे करो, मेरी तो हालत ऐसी हो गयी है कि तुम्हारे कोचिंग के बिना कुछ याद ही नहीं होता। पढ़ ही तब सकता हूँ; जब तुम सामने हो।

प्रकाशवती—यह आदत कोई अच्छी आदत नहीं है, यह अवश्य कह सकती हूँ।

निर्मलचन्द्र—ऐसा ! पर पहले तो तुम ऐसा नहीं समझती थीं। मेरे गधेपन पर भी तुम्हे अनुराग था। मुझे यदि समझ में न आता तो बार-बार तुम उसे समझातीं और जब मैं समझ जाता तब तुम्हें कितनी प्रसन्नता होती थी। मैं चाहे अपने आप पर झुँझला पड़ता, पर तुम कभी न झुँझलाती। मेरी झुँझलाहट पर हँस देतीं प्यार से एकाध चपत भी लगा......

प्रकाशवती—(कुछ क्रुद्ध होकर) इस तरह की वाहियात बातें न करो, निर्मल।

निर्मलचन्द्र—(आश्चर्य से) वाहियात बातें ! क्या मैं झूट कह रहा हूँ ?

प्रकाशवती—(और भी क्रोध से) झूठ सच की बात मैं नहीं कहती, परन्तु...परन्तु...(चुप हो जाती है।)

[निर्मलचन्द्र एक टक प्रकाशवती की ओर देखता है। कुछ देर निस्तब्धता रहती है।]

निर्मलचन्द्र—क्यों, चुप क्यों हो गयीं; अब तो बातचीत का स्रोत भी बीच ही में सूख जाता है। पहले यह स्रोत सूखना तो दूर रहा...

[फिर निस्तब्धता।]

निर्मलचन्द्र—नाराज़ न हो तो एक बात पूछूँ, प्रकाश ?

प्रकाशवती—(निर्मलचन्द्र की ओर देख) क्या है ?

निर्मलचन्द्र—तुम नाराज़ न होने का वचन दो तो पूछूँ।

प्रकाशवती—क्या मैं सदा ही झुँझलाया और नाराज़ हुआ करती हूँ, जो यह वचन माँगा जा रहा है।

निर्मलचन्द्र—नहीं, नहीं पर...

प्रकाशवती—तो फिर जो पूछना हो वह पूछो, नाराज़ होने की बात न होगी तो क्यों नाराज़ होऊँगी।

निर्मलचन्द्र—पहले तो तुम नाराज़ होने की बात पर भी नाराज़ न होती थीं। उस समय...

प्रकाशवती—(एक दम रुखाई से) पहले ..पहले...उस समय... उस समय...इस 'पहले' और इस ' उस समय ' के मारे तो नाकों दम हो गया। बिना पहले और उस समय के तुम कोई बात ही नहीं कर सकते।

[निर्मलचन्द्र कोई उत्तर न दे प्रकाशवती की ओर देखता रहता है और प्रकाशवती फिर सामने की तरफ़ देखने लगती है। कुछ देर निस्तब्धता रहती है।]

प्रकाशवती—पूछो न; क्या पूछते थे ?

निर्मलचन्द्र—(लम्बी साँस लेकर) पूछना ही पड़ेगा, बिना पूछे गुज़ारा भी तो नहीं। (कुछ रुककर) प्रकाश ..(फिर रुक कर) एक की मर्मान्तिक पीड़ा यदि दूसरे के उपहास की वस्तु हो जाय...(चुप हो जाता है।)

प्रकाशवती—(निर्मलचन्द्र की ओर देख कर) चुप क्यों हो गये !

निर्मलचन्द्र—किस तरह पूछूँ, यह सोच रहा था।

प्रकाशवती—इस सम्बन्ध मे तो मैं तुम्हें कोच नहीं कर सकती।

निर्मलचन्द्र—(लम्बी साँस लेकर) देखो, प्रकाश, हर वस्तु ठंडी सहन की जा सकती है, पर प्रेम और मैत्री में ठंडा व्यवहार नहीं। मेरे प्रति तुम्हारे व्यवहार में अन्तर पड़ा है, हमारे नये प्रोफ़ेसर ज्ञानप्रकाश के आने के बाद। मैं जानना चाहता हूँ कि यदि मेरे प्रति तुम्हारा हृदय सर्वथा उदासीन हो गया हो और मेरे तुम्हारे पास आने के कारण तुम्हें उल्टी झुँझलाहट होती हो तो . तो इम्तहान निकट है, इस झुँझलाहट से तुम्हारी पढ़ाई में भी बाधा पड़ सकती है, मैं तुम्हारे पास आना छोड़ दूँ।

[प्रकाशवती कोई उत्तर नहीं देती। वह सामने की ओर देखने लगती है। निर्मलचन्द्र प्रकाशवतो की तरफ़ देखता है। कुछ देर निस्तब्धता रहती है। फिर एकाएक प्रकाशवती उठती है। राइटिंग-टेबिल पर से कुछ पुस्तकें उठाती और बाहर की ओर जाने लगती है।]

निर्मलचन्द्र—(उठते हुए) तुमने मेरे प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दिया।

प्रकाशवती—(बाहर जाते हुए) तुम्हारे सवाल के जवाब में ही मैं प्रोफ़ेसर ज्ञानप्रकाश के यहाँ जा रही हूँ। (प्रस्थान।)

[निर्मलचन्द्र एक लम्बी साँस लेता है। उसकी आँखों में आँसू छलछला आते हैं। वह धीरे-धीरे दरवाज़े की ओर बढ़ता है।]

लघु—यवनिका

—:०:—

दूसरा दृश्य

स्थान—ज्ञानप्रकाश के बँगले का एक कमरा

समय—सन्ध्या

[कमरे की दीवालें गुलाबी रंग से रँगी हैं। दरवाजों से बाहर का उद्यान दिख रहा है, जो फैलते हुए अँधेरे से धीरे धीरे व्याप्त होता जाता है। दीवालों पर अनेक प्राकृतिक दृश्यों के चित्र हैं। छत से बिजली की बत्तियाँ झूल रही हैं, जिनके प्रकाश से कमरा प्रकाशित है। जमीन पर क़ालीन बिछा है, जिस पर बेशक़ीमती फ़रनीचर सजा है। एक सोफ़े पर ज्ञानप्रकाश बैठा है। उसकी अवस्था लगभग छब्बीस वर्ष की है। मुख और शरीर सुन्दर है। वस्त्र अंगरेज़ी ढंग के हैं। उसी के निकट की एक कुरसी पर प्रकाशवती बैठी है। उसकी वेष-भूषा पहले दृश्य के सदृश ही है।]

ज्ञानप्रकाश—तुम्हें कुछ भी बताने में आनन्द आता है, मिस प्रकाशवती। कितनी प्रखर बुद्धि है? एक बात बतायी जाती है तो दस बातें तुम्हें ख़ुद सूझती हैं, और बतायी हुई बात को जब तुम समझाने लगती हो, तब मालूम पड़ता है कि तुमसे कुछ जानना चाहिए।

प्रकाशवती—(मुसकराते हुए) क्या कहते हैं, सर, मैंने न जाने कितने मास्टरों और प्रोफेसरों से पढ़ा, किन्तु आप जिस तरह समझाते हैं, उस तरह समझाने वाला आज तक, कम से कम, मुझे कोई न मिला।

यही तो कारण है कि इतनी सी अवस्था में आप एम॰ ए॰ क्लास को पढ़ाने के लिए नियुक्त हुए हैं।

ज्ञानप्रकाश—मैंने तो आक्सफ़ोर्ड और केम्ब्रिज के विद्यार्थियों को भी देखा है, पर तुम्हारे सदृश छात्र कहीं नहीं। (कुछ रुककर) एक बात जानती हो, मिस प्रकाशवती ?

प्रकाशवती—क्या, सर ?

ज्ञानप्रकाश—विद्यार्थियों को पढ़ाने में, इस निर्माण में, मुझे एक विलक्षण प्रकार का आनन्द आता है। मनुष्य को मनुष्य बनाने, इस प्रकार के निर्माण करने, से अधिक आनंद दुनिया में शायद किसी चीज़ में नहीं आ सकता।

प्रकाशवती—इसमें सन्देह नहीं, सर।

ज्ञानप्रकाश—यही कारण है, कि धन की कोई आवश्यकता न रहने पर भी मैंने जीवन की इस दिशा को चुना है।

प्रकाशवती—यह सारी यूनिवर्सिटी जानती है, सर, कि आप वेतन के लिए यह काम नहीं कर रहे हैं।

ज्ञानप्रकाश—और फिर, मिस प्रकाशवती, अगर तुम्हारे सदृश किसी मनुष्य के निर्माण करने का सौभाग्य प्राप्त हो सके तब तो...

[ज्ञानप्रकाश एकटक प्रकाशवती की ओर देखता है। प्रकाशवती संकोच से दृष्टि नीचे की ओर झुका लेती है।]

ज्ञानप्रकाश—(प्रकाशवती की ओर ही देखते हुए) एक बात जानती हो, मिस प्रकाशवती ?

प्रकाशवती—(दृष्टि उठाकर) क्या, सर ?

ज्ञानप्रकाश—निर्माण का यह कार्य यूनिवर्सिटी में तो होता ही है पर उससे भी अधिक होता है यूनिवर्सिटी के बाद के जीवन में।

[प्रकाशवती कोई उत्तर न देकर ज्ञानप्रकाश की ओर देखने लगती है ।]

ज्ञानप्रकाश—हाँ, उस वक्त समुदाय का निर्माण नहीं हो सकता। वह निर्माण एक या कुछ व्यक्तियों तक ही सीमित रहता है। इसका अवसर मिलता है सच्चे गृहस्थ-जीवन में। (कुछ रुककर) मुझे उस जीवन का अनुभव नहीं तुम जानती हो मैं अब तक कुँवारा हूँ !

प्रकाशवती—सभी जानते हैं, सर।

ज्ञानप्रकाश—पिता जी ने न जाने कितने बार उस जीवन को आरम्भ कराना चाहा। हिन्दुस्तान और विलायत में भी न जाने कितने प्रस्ताव आये, परन्तु·· परन्तु...मुझे कोई ऐसा मिला ही नहीं, जिसका इस दृष्टि से निर्माण करने की मेरी इच्छा...(कुछ रुककर) वह बड़भागी महान बड़भागी व्यक्ति होगा, मिस प्रकाशवती, जिसे...जिसे...पत्नी...पत्नी...के रूप में तुम निर्माण करने को मिलोगी।

[प्रकाशवती कोई उत्तर न दे सिर झुका लेती है। ज्ञानप्रकाश एकटक प्रकाशवती की ओर देखता है। कुछ देर निस्तब्धता रहती है।]

ज्ञानप्रकाश—आह ! क्षमा करना, मिस प्रकाशवती, न जाने मैं आज तुम्हारे सामने क्या-क्या बक गया। तुम मेरी शिष्या हो, मुझे तुम्हारे सामने बातचीत में विवेक रखना चाहिए ? (कुछ रुककर) पर...पर...मिस प्रकाशवती, इतने दिनों से तुम्हारी प्रखर, महान् प्रखर बुद्धि देखते-देखते ही आज मेरे मुँह से इस प्रकार की बातें निकल गयीं। (कुछ रुककर) क्षमा करना, मिस प्रकाशवती, क्षमा... ।

प्रकाशवती—नहीं, सर, आपने ऐसी कौन सी बात कह दी, जिसके लिए आप बार-बार क्षमा माँग रहे हैं। आप मेरी प्रखर बुद्धि की प्रशंसा करते हैं, मेरे निर्माण करने वाला परम सौभाग्यशाली होगा, यह समझते हैं। उलट...उलट कर...मैं ये ही बातें आपके सम्बन्ध में कह दूँ तो क्या वे अनुपयुक्त...अनुपयुक्त होंगी। मैं तो समझती हूँ कि जिसे आपके सदृश निर्माणकर्ता पति के रूप में प्राप्त होगा, वह महिला, वह महिला...(एकदम झुक जाती है।)

ज्ञानप्रकाश—(अत्यधिक प्रसन्नता से गद्‌गद् होकर) **ऐसा ! तुम ऐसा समझती हो, मिस प्रकाशवती ? क्या मेरा यह सम्पन्न किन्तु सूना, स्वच्छ परन्तु निर्जीव घर...**

[प्रकाशवती कोई उत्तर नहीं देती। वह नीचे की ओर झुकी रहती है। ज्ञानप्रकाश उसकी ओर देखता है। कुछ देर निस्तब्धता रहती है।]

ज्ञानप्रकाश—क्या उत्तर की आशा करूँ, मिस प्रकाशवती ?

[प्रकाशवती फिर कोई उत्तर नहीं देती। वह उसी प्रकार बैठी रहती है। ज्ञानप्रकाश उसकी ओर देखता रहता है। कुछ देर फिर निस्तब्धता।]

ज्ञानप्रकाश—कोई उत्तर न दोगी ?

प्रकाशवती—(धीरे धीरे सिर उठाते हुए) **एम० ए० के इम्तहान के बाद ही इसका उत्तर—**

ज्ञानप्रकाश—(कुछ विचारते हुए) **हाँ, यही ठीक है। नैतिक दृष्टि से भी तुम्हारा कथन ही ठीक जान पड़ता है।** (कुछ रुककर) **पर देखो, एक बात का सदा ध्यान रखना।**

प्रकाशवती—(सिर उठाकर) **क्या, सर ?**

ज्ञानप्रकाश—न कोई पुरुष बिना योग्य स्त्री के सच्चा पुरुष हो सकता और न कोई स्त्री बिना योग्य पुरुष के सच्ची स्त्री हो सकती।

[प्रकाशवती कोई उत्तर न दे फिर सिर झुका लेती है। ज्ञानप्रकाश प्रकाशवती की ओर देखता है। कुछ देर निस्तब्धता।]

प्रकाशवती—(एकाएक खड़े होते हुए) **तो फिर आज आज्ञा हो, सर, बहुत देर हो रही है।**

ज्ञानप्रकाश—(खड़े होते हुए बाहर की ओर देख कर) **हाँ, बिलकुल ही अँधेरा हो गया।**

[दोनों एक दूसरे की ओर देखते हैं।]

यवनिका

उपसंहार

स्थान—प्रकाशवती का कमरा

समय—प्रातःकाल

[दृश्य वैसा ही है जैसा पहले दृश्य में था। प्रकाशवती उद्विग्नता से इधर-उधर टहल रही है। उसकी वेष-भूषा सदा के समान ही है। साड़ी और शलूका दूसरे रंग के हैं। निर्मलचन्द्र का प्रवेश।]

निर्मलचन्द्र—प्रकाश, एम० ए० में यूनिवर्सिटी में प्रथम आने के लिए यह तुम्हारा किसी समय का मित्र तुम्हें बधाई देता है।

प्रकाशवती—(जल्दी से निर्मलचन्द्र के पास आ उसके दोनों हाथ पकड़ कर) निर्मल, निर्मल मुझे क्षमा करो। (आँसू भर आते हैं।)

निर्मलचन्द्र—(गद्‌गद् होकर) हैं! यह क्या? यह क्या? मेरी बधाई का यह धन्यवाद है?

प्रकाशवती—(भर्राए हुए स्वर में) निर्मल, मैं अपना अपराध जानती हूँ। मैं जानती हूँ कि मैं कितनी स्वार्थी हूँ, पापिनी हूँ, निर्मल, मुझे मालूम है कि तुम मेरे ही कारण फ़ेल हुए हो।

[प्रकाशवती निर्मलचन्द्र को खींच कर ले जाती है और आराम कुर्सी पर बिठाती है। स्वयं उस कुरसी के निकट बैठती है]

प्रकाशवती—मुझे दण्ड दो, निर्मल।

निर्मलचन्द्र—दण्ड, प्रकाश, तुम्हें दण्ड! जो मेरे धुँधले मस्तिष्क का प्रकाश है, जो मेरे अँधेरे हृदय का प्रकाश है, जो मेरे समस्त जीवन का प्रकाश है, उसे दण्ड?

प्रकाशवती—तुम दण्ड न दोगे तो मैं अपने पाप का प्रायश्चित करूँगी।

निर्मलचन्द्र—तुमने कोई पाप किया हो तब तो! मैं अपने गधे दिमाग, मैं अपनी बुरी आदतों के कारण फ़ेल हुआ।

प्रकाशवती—नहीं, निर्मल, तुम मेरे कारण फ़ेल हुए, और केवल एम० ए० में ही नहीं, सारे जीवन में मेरे कारण फ़ेल होगे। (कुछ रुककर) तुम जानते हो मैंने क्या निर्णय किया है!

निर्मलचन्द्र—क्या?

प्रकाशवती—कल परीक्षा का फल सुनते ही जब मुझे मालूम हुआ कि तुम फ़ेल हो गये तभी...तभी...निर्मल, तभी मैंने तुम्हारी जीवन संगिनी होने का निर्णय कर लिया। मुहूर्त भी दिखा लायी। आगामी रविवार को हम लोगों का विवाह होगा।

निर्मलचन्द्र—(एकटक प्रकाशवती की ओर देखते हुए आश्चर्य में) प्रकाश···प्रकाश...!

प्रकाशवती—हाँ, निर्मल, यह मेरा अन्तिम निर्णय है। उस दिन के झगड़े के बाद, जो मेरे ही कारण हुआ था, तुम मेरे पास कभी नहीं आये। यह जानते हुए भी कि तुम मेरे साथ पढ़े बिना फ़ेल हो जाओगे, तुमने मेरी पढ़ाई में बाधा नहीं पहुँचायी। कल के परीक्षा के फल के बाद मैं जानती थी मुझे बधाई देने अवश्य आओगे। हर मिनिट में तुम्हारी प्रतीक्षा में काट रही थी। तुम आज न आते तो मैं तुम्हारे पास आती। (कुछ रुककर) क्यों, निर्मल, इस अपनी पुरानी प्रकाश को पत्नी रूप से स्वीकार करने में कोई आपत्ति है?

निर्मलचन्द्र—(गद्गद् स्वर से) मुझे आपत्ति! मुझे आपत्ति! किन्तु......

प्रकाशवती—किन्तु परन्तु का क्या अर्थ?

निर्मलचन्द्र—मैं...मैं सोच रहा था कि किसी समय हम दोनों उन दो हाथों के सदृश रहे हैं जो एक ही मस्तिष्क से संचालित होते हैं। वह

मस्तक तुम्हारा था क्योंकि मैं तो गधा ठहरा। मेरे सदृश एक मूर्ख के साथ विवाह करने से तुम्हारा......तुम्हारा जीवन तो—

प्रकाशवती—मेरा जीवन ! मेरा जीवन, निर्मल, (कुछ रुककर) देखो, बलवान मस्तिष्क का होना निसर्ग ने कदाचित् उतना कठिन नहीं बनाया, जितना सहृदय हृदय का, और उसमें भी ऐसे हृदय का जो बालकों सा भोला हो, नवनीत सा कोमल हो, हिम सा निर्मल हो। जिसका निर्माण किया जा सके। मेरा...मेरा जीवन, निर्मल,...तुम्हारा निर्माण... तुम्हारा निर्माण करके धन्य......धन्य हो जायगा। निर्माण का आनंद—निर्माण का आनन्द कैसा होता है, यह मैं...यह मैं जानती...जानती हूँ, निर्मल।

[निर्मल उठ कर एकाएक प्रकाशवती के पैरों में गिर पड़ता है। प्रकाशवती जल्दी से उसे उठा कर स्वयं उसके पैर पकड़ती है।]

प्रकाशवती—यह क्या, यह क्या कर रहे हो मुझे पाप में घसीट रहे हो। मैं हिन्दू हूँ, सच्ची हिन्दू पत्नी बनना चाहती हूँ। हिन्दू पत्नी के निर्माण में भी...निर्माण में भी समर्पण...समर्पण है।

[निर्मलचन्द्र प्रकाशवती को हृदय से लगा लेता है।]

यवनिका

समाप्त

सुदामा के तन्दुल

•

पात्र, स्थान

पात्र

देवराज—मिनिस्टर

ग़फ़ूर ख़ाँ—मिनिस्टर का सेक्रेटरी

हमीदुल्ला—मिनिस्टर का चपरासी

पूरनचन्द
उदयचन्द } — देहाती स्वयं-सेवक

स्थान

एक नगर

स्थान—देवराज के बँगले का वेटिंग-रूम

समय—मध्याह्न

[कमरे की दीवालें सफेद कलई से पुती हैं। पीछे की दीवाल में तीन खिड़कियाँ हैं। जिनसे बाहर के उद्यान का कुछ भाग दिखायी देता है। ग्रीष्म के मध्याह्न का प्रखर सूर्य बगीचे को तपा रहा है। बायीं ओर की दीवाल में एक दरवाज़ा है, जो बरामदे में खुलता है और इससे बरामदे का कुछ हिस्सा दिख रहा है। दाहनी तरफ़ की दीवाल में भी एक दरवाज़ा है, जो बन्द है। कमरे के छत से बिजली की कुछ बत्तियाँ झूल रही हैं। जमीन पर कालीन बिछा है और इस पर सोफ़ा-सेट, कुछ कुर्सियाँ तथा टेबिलें सजी हैं। पीछे की दीवाल की बीच की खिड़की के ऊपर एक बोर्ड लगा है, जिस पर अँग्रेज़ी में लिखा है, WAITING ROOM बायीं ओर के दरवाज़े से पूरनचंद उदयचंद को साथ लिए हुए हमीदुल्ला का प्रवेश। हमीदुल्ला अधेड़ अवस्था का ऊँचा-पूरा मनुष्य है। सरकारी वरदी पहने है। कमरबन्द में कटार लगी है। पूरनचंद और उदयचंद करीब चालीस वर्ष की उम्र के दुबले-पतले आदमी हैं। पूरनचंद कुछ ऊँचा है और उदयचंद ठिगना। दोनों खादी के कुरते और धोतियाँ पहने हैं और सिर पर गाँधी-टोपियाँ लगाये हैं। पैरों में देहाती जूते हैं। पूरनचंद गले में दुपट्टा लिये है। दुपट्टे की एक छोर में कुछ बँधा है। दोनों के वस्त्र और जूते कुछ बहुत साफ़ सुथरे नहीं हैं। पूरनचंद के बगल में दो फाइलें दबी हैं। दोनों ही फाइल बहुत जीर्ण-शीर्ण दशा में है। उदयचंद के बगल में एक नयी फाइल दबी हुई है।]

हमीदुल्ला—आप लोग यहीं बैठें, मैं सेक्रेटरी साहब को इत्तला करता हूँ। वे साहब को ख़बर देंगे। (जाने लगता है फिर रुककर) हाँ, आप लोगों का नाम तो पूरनमल और उदयचंद है न……!

पूरनचंद—जी, पूरनचंद……

उदयचंद—और उदयचंद।

हमीदुल्ला—(जाते जाते फिर रुककर) **और गाँव······गाँव आपने कौन सा बताया था ?**

पूरनचंद—कठौता ।

हमीदुल्ला—कठौता ?

उदयचंद—जी जी······

हमीदुल्ला—बहुत अच्छी बात है ।

[हमीदुल्ला का बायीं ओर के दरवाज़े से प्रस्थान । पूरनचंद और उदयचंद सोफ़े पर बैठते हैं ।]

पूरनचंद—(एकदम से सोफ़े से उठते हुए) नहीं नहीं, इस कोच पर हमें नहीं बैठना चाहिये । यहाँ तो वे आकर बैठेंगे ।

उदयचंद—(बैठे बैठे ही) तो क्या हम बराबरी से बैठ भी नहीं सकते ।

पूरनचंद—(दूसरी कुरसी पर बैठते हुए) अरे भाई, वे मिनिस्टर हैं ।

उदयचंद – तो क्या हुआ, हम देश-भक्त हैं, और उनसे बड़े देश-भक्त । वे जेल नहीं गये । हम तीन-तीन दफ़े जेल हो आये हैं ।

[नेपथ्य में दाहनी ओर से बातचीत की अस्पष्ट ध्वनि आती है ।]

पूरनचंद—(उसी ध्वनि की ओर झुक कर कान लगाते हुए) चुप चुप ।

[उदयचंद भी चुपचाप उसी आवाज़ को सुनने लगता है : आवाज़ स्पष्ट सुनायी नहीं देती कुछ देर तक दोनों नहीं बोलते ।]

उदयचंद—कुछ साफ़ नहीं सुन पड़ता ।

पूरनचंद—मैं कहता हूँ कि कोच पर मत बैठो । (अपने नज़दीक की कुर्सी को ओर इशारा कर) इस पर आकर बैठ जाओ । कोई हरजा न हो जायगा ।

उदयचंद—(उठ कर पूरनचंद के निकट की कुर्सी पर बैठते हुए) कोच पर बैठे रहने में भी कोई नुकसान तो था नहीं, पर खैर, जैसा तुम कहो ।

पूरनचंद—(कमरे के चारों तरफ़ से देखते हुए बोर्ड पर दृष्टि जमा) यह क्या लिखा है, उदयचंद भइया ! (पहले अक्षर को पढ़ने की कोशिश करते हुए) एम……।

उदयचंद—(बोर्ड को ही देखते हुए) एम नहीं डबलू है।

पूरनचंद—डबलू ! डबलू नहीं, एम है।

उदयचंद—कभी नहीं, डबलू है।

पूरनचंद—अच्छा पहले मुझे पढ़ने दो एम, ए, वन……।

उदयचंद—सब गलती !

पूरनचंद—सब गलती। एम के बाद का अगर एन हो तो चार-चार आने की खरियत।

उदयचंद—नहीं, वह तो ए है, पर उसके इधर की तरफ एम नहीं डबलू है और उधर की तरफ वन नहीं आई है।

पूरनचंद—मतलब क्या निकला ?

उदयचंद—मतलब ! पूरा पढ़ने पर मतलब निकलेगा।

पूरनचंद—अच्छा तुम्हीं पढ़ो।

उदयचंद—डबलू, ए, आई, टी, आई, एन, सी……।

पूरनचंद—सी कभी नहीं, वह जी है।

उदयचंद—ना, सी है। मुझे पूरा पढ़ तो लेने दो।

पूरनचंद—अच्छा पढ़ो, पढ़ो।

उदयचंद—(फिर से पढ़ते हुए) डबलू, ए, आई, टी, सी, आई, एन, सी, आर, ओ, ओ, एम।

पूरनचंद—क्या हुआ।

उदयचंद—डबल्यू, ए आई, टी आई, एन सी॰ आर, ओ, ओ, एम।

पूरनचंद—माने !

उदयचंद—माने क्या ! पढ़ दिया।

पूरनचंद—मतलब क्या निकला ?

उदयचंद—इतनी—अँगरेज़ी मैं भी कहाँ जानता हूँ।

पूरनचंद—नहीं, देखो, मैं मतलब निकलता हूँ। एम, ए, वन। यानी मिनिस्टर एम. ए. हैं न, और वन नम्बर में आये होंगे......टी.....

[नेपथ्य से अब कुछ ज्यादा आवाज आती है।]

उदयचंद—चुप चुप, देखो, इस दफ़ा कुछ समझ में आयगा।

[दोनों चुप हो कान लगा कर सुनते हैं, पर कुछ समझ में नहीं आता और आवाज फिर धीमी पड़ जाती है।]

पूरनचंद—(फिर बोर्ड की ओर देखते हुए) अच्छा, देखो पढ़ता हूँ।

उदयचंद—अरे जाने भी दो। अब यह बताओ कि मिनिस्टर साहब से क्या क्या कहना है ?

पूरनचंद—बातों के पहले यह कहो नमस्कार कैसे करना ?

उदयचंद—नमस्कार ? नमस्कार नहीं कहना चहये गुडमारनिंग।

पूरनचंद—अंग्रेज़ी में ? गुलामी भाषा में। नहीं नमस्कार करना चहये, दोनों हाथ जोड़कर और मुँह से कहना चहये बन्देमातरम्।

उदयचंद—अच्छी बात है, मान लिया बन्देमातरम्।

पूरनचंद—(खड़े हो हाथ जोड़) इस तरह बन्देमातरम्, मिनिस्टर साहब। इस तरह।

उदयचंद—नहीं, मिनिस्टर साहब नहीं, आज कल कांगरेस वाले कांगरेस वालों को एक नये नाम से पुकारते हैं।

पूरनचंद—(फिर बैठते हुए) किस नाम से ?

उदयचंद—कामरेड।

पूरनचंद—फिर वही गुलामी भासा।

उदयचंद—पर, भाई, यह सबद तो अपनी भाषा में ले लिया गया है। कामरेड तो कहना ही होगा।

पूरनचंद—अच्छा, कामरेट सही।

उदयचंद—कामरेट नहीं, कामरेड।

पूरनचंद—(फिर खड़े होकर हाथ जोड़) इस तरह—बन्देमातरम्, कामरेड मिनिस्टर साहब।

उदयचंद—कामरेड के साथ मिस्टिर साहब नहीं बोला जाता।

पूरनचंद—(फिर बैठते हुए) तो ?

उदयचंद - नाम लिया जाता है। कहना होगा बन्देमातरम् कामरेड देवराज।

पूरनचंद—सिरफ देवराज ! यह तो गुस्ताखी होगी।

उदयचंद—कामरेड जो देवराज के साथ लगा हुआ है।

पूरनचंद—पर सुनने में अच्छा नहीं लगता। (विचार करते हुए) देखो ऐसा करो।

उदयचंद—कैसा ?

पूरनचंद—(फिर खड़े होकर हाथ जोड़) बन्देमातरम् कामरेड देव-राज जी।

उदयचंद—(विचारते हुए) अच्छा, ऐसा सही।

पूरनचंद—(बैठते हुए) अच्छा, आगे क्या ?

उदयचंद—इसके बाद हमारा तो कोई स्वारथ है नहीं, गाँव वालों की विपदाएँ बतायेंगे और क्या ? कहेंगे लगान बहुत ज्यादा है, पटवारी और रेवन्यू निस्पेक्टर फसल की जाँच ठीक नहीं करते, जमींदार और तहसीलदार मिलकर वसूली में बहुत तंग करते हैं, रसद और बेगार भी अभी पूरी बन्द नहीं हुई। (अपनी बगल की फाइल की ओर संकेत कर) इसके कुल कागद पढ़ देंगे।

पूरनचंद—पर इसके पहले और कुछ कहना है ?

उदयचंद—क्या ?

पूरनचंद—(जोर से) हम लोगों की जुगों की तपस्या सफल हो गयी।

उदयचंद—कभी नहीं।

पूरनचंद—क्यों ?

उदयचंद—इनके मिनिस्टर होने से हमारी जुगों की तपस्या सफल हो गयी ? तपस्या सफल होगी तब, जब सुराज होगा।

पूरनचंद—अच्छा जाने दो, यह नहीं कहेंगे पर एक काम तो करना ही होगा।

उदयचंद—क्या ?

पूरनचंद—जो सौगात मैं लाया हूँ, वह तो देनी होगी।

उदयचंद—पेड़े ?

पूरनचंद—हाँ, भाई, तुम्हारी भौजी ने बनाये हैं। उनमें केसर डाली है, मिसरी का रवा भी, और इलायची बुरकायी है। याद नहीं है, जब ये चुनाव के दौरे में कठौता आये थे, तब इसी तरह के पेड़े कितने पसन्द किये थे ! माँग-माँग कर खाये थे। कहा था जिन्दगी में ऐसे पेड़े कभी नहीं खाये।

उदयचंद—हाँ पेड़े दे देना।

पूरनचंद—पर कुछ कह के देना चाहिये।

उदयचंद—क्या कहोगे ?

पूरनचंद—तुम्हारी भौजी ने कहा था यों कहना—ये सुदामा के तन्दुल हैं। भगवान के लिए जिस तरह उनकी भौजी ने तन्दुल भेजे थे उसी तरह आपकी भौजी ने आपके लिए ये पेड़े भेजे हैं।

[उदयचंद जोर से हँस पड़ता है]

पूरनचंद—मैं कुछ नहीं कहता, भौजी का संदेशा है इसलिए कह देना।

[नेपथ्य में फिर कुछ ज़ोर से आवाज़ आने लगती है। पूरनचंद उठ कर जल्दी से दाहनी तरफ़ के दरवाज़े के निकट जाता और कान को लगा कर सुनता तथा उँगली का इशारा कर उदयचंद को बुलाता है। उदयचंद नहीं आता। थोड़ी देर में पूरनचंद वापस आ जाता है।

पूरनचंद—(अपनी कुर्सी पर बैठते हुए) आवाज़ तो उन्हीं सरीखी थी, पर कुछ समझ में नहीं आया। (कुछ रुककर) पर क्यों, उदय भैया, हमें वे पहचान तो लेंगे न ?

उदयचंद—इसमें कोई सक है ? हम क्या इतने मामूली आदमी हैं कि पहचाने ही न जायँ। सन् २० से हमारे संवाद अखबारों ही में छपते हैं, फोटू छपती है। फिर कठौता में हमने इन्हें ऐसा भोज दिया था जैसा इनने कहीं खाया न होगा।

पूरनचंद—और न पहचाना तो हम अपनी पहचान करा देंगे। अखबारों और चिट्ठियों का फैल लाये ही हैं। (अपनी बगल का एक फाइल खोलते हुये) यह देखो सन् २१ के कलकत्ते के 'स्वतंत्र' में हमारे जेल जाने का हाल छपा है। (फाइल का पन्ना उलटते हुए) यह सन् २३ के बनारस के 'आज' में हमने सुराज पार्टी के चुनाव में जो मदद दी उसका वरनन छपा है। (फिर फाइल का पन्ना उलट कर) यह सन् २६ में कानपुर के 'प्रताप' में जब हिन्दू समाज का बड़ा जोर था और मालवी जी तथा लाला जी सरीखे नेता काँग्रेस का विरोध कर रहे थे उस बखत हमने चुनाव में काँग्रेस के लिए जो दौड़-धूप की थी उसका हाल छपा है। (फिर फाइल का पन्ना उलट कर) यह जबलपुर के 'लोकमत' में सन् ३० में जब हम जेल गये थे उसका हाल छपा है। (फिर फाइल का पन्ना उलट कर) यह सन् ३२ में जब लाठी चार्ज में हम घायल हुए थे उस बखत का हाल प्रयाग के 'अभ्युदय' में छपा है। (जल्दी जल्दी बाकी के पन्ने उलटते हुए) और भी न जाने कितने पत्र-पतरिकाओं में हमारे समाचार और फोटू छपी है। (वह फाइल बन्द कर दूसरा फाइल खोलते तथा उसके पन्ने उलटते हुए)

और यह मालवी जी, लाला जी, नेहरू जी वगैरा वगैरा की न जाने कितनी चिट्ठियें हैं। आखिर में तो मिनिस्टर साहब की ही चिट्ठी है, जो चुनाव के बाद उन्होंने हमारे पास धन्यवाद देते हुए भेजी थी। (वह फाइल भी बन्द कर दोनों फाइलों को फिर बगल में दबाते हुए) वे न पहचानेंगे तो हम यह सब न बतायेंगे।

उदयचंद—नहीं, नहीं, वे जरूर पहचान जायँगे। (कुछ रुककर) पर, भाई, बड़ी देर हो गयी। प्यास के मारे गला सूखा जाता है।

पूरनचंद—प्यास ! अरे पानी तो अभी आ जायगा। (बायें दरवाजे से बाहर जाकर जोर से) चपरासी साहब ! ओ चपरासी साहब !

[पूरनचंद भीतर आता है। पीछे पीछे हमीदुल्ला।]

हमीदुल्ला—(डाँटते हुए) आपको इस तरह शोर नहीं करना चाहिए।

उदयचंद—पर, भाई, मारे प्यास के हमारे प्रान निकले जा रहे हैं।

हमीदुल्ला—(घंटी का बटन दिखाते हुए) आपको इसे दाबना चाहिए था। अब कोई जरूरत पड़े तो इसे दाबिए। यह मिनिस्टर का बँगला है, तमाशा नहीं। (बाहर जाते हुए) मैं पानी अभी भेजता हूँ।

पूरनचंद—आपने हम लोगों के आने की खबर दे दी।

हमीदुल्ला—(कमरे के बाहर निकलते हुए) जी हाँ, सेक्रेटरी साहब से कह दिया। (जाता है)

पूरनचंद—(जो चपरासी की डाँट के कारण अब तक खड़ा हुआ था, अब बैठते हुए) भाई, यहाँ तो बड़े बड़े कानून कायदे हैं।

उदयचंद—मिनिस्टर का बँगला है, तमाशा नहीं।

पूरनचंद—पर यह सब इन्हीं छोटे आदमियों के बीच होगा, मिनिस्टर साहब तो सच्चे कांगरेसी........।

[वरदी पहने हुए एक नौकर एक रकाबी में दो पानी के गिलास लिये हुए प्रवेश। दोनों पानी पीते हैं। नौकर गिलास वापस ले जाता है।]

उदयचन्द—गरम पानी था, जरा भी ठंडा नहीं।

पूरनचन्द—गरमी कितनी है।

उदयचन्द—पर हमने तो कठौता में इनके लिए पचीस मील से क्वार की गरमी में बरफ़ मँगाया था। ये जेठ की गरमी में मिट्टी की सुराही का ही पानी पिला देते।

[नेपथ्य में अब जोर की आवाज़ आती है।]

उदयचन्द—मिनिस्टर साहब की ही अवाज है। (दाहिनी ओर इशारा कर) इसी के पास के कमरे में हैं। कहाँ तक बैठे रहेंगे, चलो खोल कर वहीं चलें।

[उदयचंद दाहिनी ओर जाकर दरवाजा खोलता है। दरवाजा का एक पल्ला खुलते ही मिनिस्टर के दफ़्तर का कुछ हिस्सा दिखायी देता है।]

नेपथ्य से—(जोर से) यह कौन बदतमीज़ है, कि इस तरह दरवाज़ा खोल रहा है।

[उदयचंद जल्दी से अपनी कुरसी पर आकर बैठता है। बायीं ओर से दौड़ते हुए हमीदुल्ला का प्रवेश।]

हमीदुल्ला—(दाहिनी ओर का दरवाज़ा बन्द करते हुए) आप लोगों ने तो कमाल कर दिया।

[बायीं ओर से गफ़ूर खाँ का प्रवेश। वह अधेड़ अवस्था का ठिगना और मोटा आदमी है, अँगरेज़ी लिबास है। हमीदुल्ला बाँयें दरवाजे से बाहर जाता गफ़ूर खाँ को देख कर पूरनचंद और उदयचंद खड़े हो दोनों हाथ से उसे नमस्कार कर कहते हैं—'वन्देमातरम्']

गफ़ूर खाँ—(एक हाथ उठाकर दोनों को नमस्कार का उत्तर देते हुए) आप लोग ऑनरेबिल मिनिस्टर से मिलने आये हैं?

पूरनचन्द—जी।

गफ़ूर खाँ—आपने कोई एप्वाइन्टमेन्ट किया था?

[पूरनचंद उदयचंद की तरफ़ देखता है, उदयचंद पूरनचंद की ओर।]

पूरनचन्द—(बगल से एक फ़ाइल निकाल कर उसकी आख़िरी चिट्ठी गफ़ूर खाँ को दिखाते हुए) मिनिस्टर साहब हमको जानते हैं, यह देखिए उनकी चिट्ठी है।

गफ़ूर ख़ाँ—जानने की बात नहीं है, आपने उनसे मिलने के लिए कोई वक़्त लिया था?

उदयचन्द—जी नहीं, पर जब वे हमारे गाँव आये थे तब उनने कहा था कि हम आधी रात को भी चाहें तो उनसे मिलने आ सकते हैं।

गफ़ूर ख़ाँ—आप के गाँव में कब गये थे?

उदयचन्द—चुनाव के बखत।

गफ़ूर ख़ाँ—आह! वह बिल्कुल दूसरी बात है। मिनिस्टर होने के बाद आपने उनसे मुलाकात का कोई टाइम मुकर्रर कराया था?

[उदयचंद पूरनचंद और पूरनचंद उदयचंद की ओर देखते हैं।]

गफ़ूर ख़ाँ—(जाते हुए) ऑनरेबिल मिनिस्टर का क़ायदा है कि बिना वक़्त मुकर्रर कराये वे किसी से नहीं मिलते और फिर आज तो उन्हें बिल्कुल ही फ़ुरसत नहीं है। बहुत...बहुत ही ज़रूरी काम में मशगूल हैं।

पूरनचन्द—(पीछे पीछे जाते हुए गिड़गिड़ा कर) पर...पर...हम लोग बहुत दूर से आये हैं, बहुत दूर से इस गरमी में। न जाने कितना खरच पड़ गया। हम दरसन चाहते हैं, सिरफ दरसन...एक मिनट के लिए...

गफ़ूर ख़ाँ—(कुछ पिघलते हुए) अच्छी बात है, मैं कहता हूँ, लेकिन मुशकिल अज़हद मुशकिल...(प्रस्थान।)

पूरनचन्द—(उदयचंद के पास आकर) उदय भैया। (आँखों में आँसू आ जाते हैं।)

उदयचंद—(बेपरवाही से) चलो चलें, न मिला, न सही।

पूरनचंद—जवाब तो सुन लें।

नेपथ्य में—(बहुत ज़ोर से) काम भी कुछ करूँ कि बस दिन और रात मुलाक़ात। एक का दस तो हो नहीं सकता। नाकों दम हो गया।

(इसके बाद ही ज़ोर से कागज़ पटकने की आवाज़ आती है। पूरनचंद और उदयचंद चुपचाप एक दूसरे की ओर देखते हैं। बाँयें दरवाज़े से देवराज और उसके पीछे गफ़ूर खाँ का प्रवेश। देवराज की अवस्था लगभग पचास वर्ष की है। सिर और मूँछों के बाल आधे सफ़ेद हो गये हैं। वह खादी की शेरवानी और चूडीदार पाजामा पहने हैं। सिर नंगा और पैरों में पंजाबी जूते हैं। मिनिस्टर को आते देख पूरनचंद का मुख खिल उठता है। उदयचंद के मुख पर भी कुछ प्रसन्नता अवश्य झलकती है। दोनों देवराज की ओर बढ़ते हैं।]

पूरनचंद—(दोनों हाथ जोड़कर) वन्देमातरम्...का...काम... मिनिस्टर साहब।

उदयचंद—(दोनों हाथ जोड़कर) वन्देमातरम्, कामरेड देवराज।

देवराज—वन्देमातरम्. वन्देमातरम्। कहिए कहाँ से आना हुआ?

पूरनचंद—आपने शायद हम लोगों को पहचाना नहीं। मेरा नाम पूरनचद है। (उदयचंद की ओर इशारा कर) इनका नाम उदयचद।

देवराज—हाँ, इस वक़्त मुझे याद नहीं आ रहा है।

पूरनचंद—हम लोग कठौता गाँव में रहते हैं।

देवराज—कठौता, यह गाँव इसी ज़िले में है?

पूरनचंद—जी नहीं, इस प्रान्त के उत्तर का पहला ज़िला।

उदयचंद—आप तो वहाँ चुनाव के समय आ चुके हैं। वहाँ आपको बहुत बड़ा भोज दिया गया था।

देवराज—चुनाव में कितनी जगह गया था ? कितने भोज दिये गये थे ? कोई कहाँ तक याद रख सकता है।

पूरनचंद—(फ़ाइल निकाल कर देवराज की चिट्ठी बताते हुए) यह चिट्ठी आपने हमें लिखी थी।

देवराज—(चिट्ठी पर दृष्टि डाल कर बेपरवाही से) ओ ! धन्यवाद का सर्क्यूलर है।

पूरनचंद—सरकू ! सरकू नहीं आप देखें चिट्ठी है।

देवराज—हाँ, हाँ, सर्क्यूलर भी चिट्ठी ही होती है।

पूरनचंद—(दोनों फ़ाइल देवराज को बताते हुए) हम लोगों का कुल हाल आपको इन कागदों से मालूम हो जायगा।

देवराज—ज़बानी कहिए न आप क्या चाहते हैं ?

पूरनचंद—हम चाहते। हम चाहते क्या ? मिनिस्टर साहब हम तो समझते हैं कि हम लोगों की जुगों की तपस्या सफल हो गयी...और... और...(डुपट्टे की गाँठ खोल उसमें बँधा हुआ पेड़ों का दोना निकाल कर) ये सुदामा के तन्दुल हैं। भगवान के लिए जिस तरह उनकी भौजी ने तन्दुल भेजे थे उसी तरह आपकी भौजी ने आपके लिए ये पेड़े भेजे हैं। (पेड़े का दोना देवराज को देने लगता है।)

देवराज—(थोड़ा पीछे हट कर) टेबिल पर रख दीजिए। मेरे हाथ ख़राब हो जायँगे (घन्टी का बटन दबाता है।) और कोई काम ?

उदयचंद—जी हाँ, हमारे यहाँ किसानों को बड़ा कष्ट है ..(फ़ाइल रखकर पढ़ते हुए) फसल...

देवराज—(बीच ही में) अपने यहाँ का कुल हाल लिखकर आप अपने तहसीलदार के मार्फ़त भेज दीजिए।

उदयचंद—लेकिन उसी की तो शिकायत...

देवराज—(बीच ही में) देखिए, मुझे दूसरे काम इससे कहीं ज़्यादा ज़रूरी है। दूसरे के वक़्त की चोरी करने के बनिस्बत आप और कोई अच्छा काम कर सकते हैं।

[हमीदुल्ला का प्रवेश।]

देवराज—(पेड़े के दोने को दिखाकर) यह मिठाई ले जाओ। अपने बच्चों को खिला देना। (हमीदुल्ला दोने को उठाता है।) और देखो, टेबिल अच्छी तरह साफ़ करा देना।

[हमीदुल्ला दोना उठा कर सलाम कर जाता है।]

देवराज—अच्छा, माफ़ कीजिए, मुझे आज बहुत.. बहुत ज़रूरी काम है।

[देवराज और गफ़ूर ख़ाँ बायीं ओर के दरवाज़े से बाहर जाते हैं। अत्यधिक निराशा की मुद्रा से पूरनचंद और कुछ क्रोधमय मुद्रा से उदयचंद हाथ जोड़ कर नमस्कार करते हैं पर उनको नमस्कार का भी कोई उत्तर नहीं मिलता। दोनों एक दूसरे की ओर देखते हैं।]

पूरनचंद—वख़्त की चोरी ! हम लोग चोर !

उदयचंद—मेरे तो भूख के मारे प्राण निकल रहे हैं। हमारा भोज खाया था। दो टुकड़ों के लिए भी न पूछा।

पूरनचंद—उन पेड़ों से कुछ शान्ति मिलती पर वे भी...

उदयचंद—और मैं तो उससे छीन कर उन्हें खा जाता पर उसका... उसका...छुआ हुआ...

[दोनों धीरे धीरे जाते हैं।]

यवनिका

समाप्त

—:●:—

धूनी

पात्र, स्थान

पात्र

चौधरी रामदीन—एक एम० एल० ए०

विश्वेश्वर प्रसाद—एक मिनिस्टर

भीमसिंह—विश्वेश्वर प्रसाद का नौकर

स्थान

एक नगर

स्थान—विश्वेश्वर प्रसाद के बँगले का कमरा

समय—प्रातःकाल

[कमरे की दीवालें और छत सुन्दर रंग से रंगी हैं। दरवाजे और खिड़कियों में शीशे के किवाड़ हैं। जमीन पर बेशक़ीमती फ़र्श बिछा हुआ है, जिस पर सुन्दर फ़रनीचर है। छत से शानदार शेडों से ढकी हुई बिजली की बत्तियाँ तथा पंखे झूल रहे हैं। चौधरी रामदीन का प्रवेश। रामदीन काले रंग का ठिगना और दुबला पतला आदमी है। खादी के कपड़े पहने है, जो यात्रा के कारण रेल के कोयले तथा धूल आदि से मैले हो गये हैं। रामदीन के पीछे पीछे भीमसिंह आता है। वह रामदीन का चमड़े का सूट-केस और बिस्तर लादे हुए है। रामदीन आकर एक सोफ़े पर बैठता है। भीमसिंह कमरे के एक कोने में उसका सामान रखता है।]

रामदीन—यू नो, यू नो, भीमसिंह, मुझे फ़ौरन गरम चा चाहिए। टोस्ट और बटर, उसी के साथ थोड़ी सी मिठाई और नमकीन, दो अंडे भी, अंडों के साथ टेबिल साल्ट, मामूली नमक नहीं, टेबिल साल्ट। और......और चा की शक्कर भी दानेदार। (कुछ रुककर याद करते हुए) और......और बस इस वक्त इतना ही; यू नो।

भीमसिंह—बहुत अच्छा सरकार। (जाने लगता है।)

रामदीन—और जल्दी, भीमसिंह, यू नो, जल्दी। आज ड्राइवर ने गाड़ी स्टेशन लाने में देर कर दी, पन्द्रह मिनिट मुझे गाड़ी का रास्ता देखना पड़ा। मिअर वेस्ट आफ़ टाइम, यू नो, मुझे चा लेते ही बाहर जाना है, एकदम, यू नो। कुछ ज़रूरी एन्गेजमेन्ट्स हैं, यू नो। ड्राइवर से अभी बोल देना गाड़ी बिलकुल तैयार रहे, साहब चा लेते ही बाहर जायगा। (कुछ याद करते हुए) और तो...और तो इस वक्त कुछ नहीं, यू नो।

[भीमसिंह जाने लगता है।]

रामदीन—हाँ, भीमसिंह, (भीमसिंह रुक जाता है) दोपहर का खाना भी ठीक रहे, अभी से किचिन में खबर कर देना मिनिस्टर साहब के साथ एक मेहमान और होगा, यू नो। और...और हिन्दुस्तानी और अंग्रेज़ी दोनों तरह का खाना होगा, वैजोटेरियन और नॉनवेजीटेरियन दोनों तरह की डिशेज़, यू नो।

[भीमसिंह जाने लगता है]

रामदीन—हाँ, भीमसिंह, (भीमसिंह रुक जाता है।) मिनिस्टर साहब क्या कह रहे हैं ?

भीमसिंह—सो रहे हैं, हुजूर।

रामदीन—अभी तक सो रहा है ! मिनिस्टर होने के बाद कुछ जादा आराम तलब हो गया है !

भीमसिंह—रात को दो बजे तक आफ़िस में काम करते रहे, सरकार।

रामदीन—अच्छा, अच्छा, चा लाओ, जल्दी, एकदम जल्दी, खूब, गरम, टोस्ट, बटर, मिठाई, नमकीन, अन्डा, टेबिल-साल्ट, दानेदार शक्कर, यू नो, यू नो। और ड्राइवर से भी बोल दो। किचिन में भी कह दो।

[भीमसिंह का प्रस्थान। रामदीन कुरसी पर से उठ रेडियो बजाना शुरू करता है, वह भी बड़े ऊँचे स्वर में। कुछ देर में भीमसिंह एक बड़ी भारी रकाबी (ट्रे) में चा और सब माँगा हुआ सामान लेकर आता और एक टेबिल पर रखता है। रामदीन उठ कर टेबिल के निकट की कुरसी पर बैठता है। भीमसिंह जाता है। रामदीन चा बनाता और खाना शुरू करता है। थोड़ा सा ही खाकर नाक-भौं सिकोड़ता है। फिर चा की एक घूँट पीता है और एकदम टेबिल को लात मारता है। बड़ी ज़ोर से टेबिल गिरती है। बहुत सा समान फैलता है। कुछ चीनी मिट्टी के बर्तन फूटते हैं। फ़र्श खराब होता है। ज़ोर की आवाज़ सुनकर भीमसिंह दौड़कर आता है।]

रामदीन—(गरजकर) सड़ा सामान ! ठंडा चा ! बदतमीज़ ! बुलाओ ड्राइवर को, हम होटल जायगा, वहाँ चा पियेगा ।

भीमसिंह—ड्राइवर चाय पीने गया है, सरकार ।

रामदीन—(और ज़ोर से) ड्राइवर चा पीने गया है । फिर हमारा एन्गेजमेन्ट । (दरवाज़े पर जाकर ज़ोर से चिल्लाकर) ड्राइवर ! ओ ड्राइवर ! ड्राइवर का बच्चा ! शैतान !

[भीमसिंह ड्राइवर को बुलाने के लिए दौड़ता है । रेडियो की बुलंद आवाज़, टेबिल का गिरना, और रामदीन की चिल्लाहट से सारा बँगला गूँज उठता है । विश्वेश्वर प्रसाद का खादी का स्लीपिंग-सूट और ड्रेसिंग-गाउन पहने अलसाये हुए नेत्रों और उबासी लेते हुए मुँह से प्रवेश । विश्वेश्वर प्रसाद की उम्र क़रीब पैंतालीस वर्ष की है वह गेहुएँ रंग का ऊँचा-पूरा, कुछ मोटा-सा मनुष्य है । विश्वेश्वर प्रसाद कमरे का यह हाल देखकर झल्ला जाता है जो उसकी मुख-मुद्रा से प्रकट हो जाता है ।]

विश्वेश्वर प्रसाद—(रामदीन की ओर देखकर) क्यों, चौधरी साहब, क्या हुआ ?

रामदीन—कुछ नहीं, यू नो, आपके नौकर बड़े बदतमीज़ हैं ।

विश्वेश्वर प्रसाद—(रुखाई से) आख़िर हुआ क्या ?

रामदीन—हुआ क्या ? ऐसी बात ही कौन सी है जो सुबह से अब तक न हो गयी हो । जब ट्रेन आयी तब प्लेटफ़ार्म पर कोई नहीं । सोचा, शायद बाहर मोटर हो, बाहर आया, बाहर भी गाड़ी नदारद । एक घंटे इन्तज़ार किया, तब मोटर की सूरत दिखी ।

विश्वेश्वर प्रसाद—(हाथ की घड़ी देखते हुए) एक घंटा तो अभी गाड़ी आये भी नहीं हुआ, जनाब, हाँ टाइम बदल गया हो, या गाड़ी ही घंटे भर पहले आ गयी हो, तो दूसरी बात है ।

रामदीन—एक घंटे से कुछ कम ठहरना पड़ा होगा । यहाँ आया और चा मँगायी तो दिसम्बर के महीने में चा की जगह आया बरफ ।

गन्दी मिठाई। बासी टोस्ट और बटर। अब होटल जाना चाहता हूँ तो ड्राइवर ला पता। यू नो, हम लोग भी एम० एल० ए० हैं। हम लोगों के भी कुछ एन्गेजमेन्ट रहते हैं। एन्गेजमेन्ट आप मिनिस्टरों का ही ठेका नहीं है, यू नो।

विश्वेश्वर प्रसाद—(टूटे हुए बर्तन और बिखरे हुए सामान की ओर संकेत कर) और यह सब क्या है ?

रामदीन—जो कुछ सुबह से हुआ उसका नतीजा ! मैं आखिर आदमी हूँ, यू नो।

विश्वेश्वर प्रसाद—आदमी ही नहीं, जनाब, आप मेरे मेहमान हैं, नहीं तो······और क्या कहूँ ?

रामदीन—तब तो फिर मेहमान ही नहीं और······और भी कुछ हूँ। (विश्वेश्वर प्रसाद की तरफ़ देखते हुए सिर हिला कर) यू नो······यू नो।

विश्वेश्वर प्रसाद—(हिक़ारत भरे स्वर से) अजी जनाब ऐसी मिनिस्टरी पर लानत भेजता हूँ, जानते हैं आप ? सुबह से सारे बँगले को सिर पर उठा कर रख लिया, ऐसा गुल गपाड़ा जैसे भूकम्प हो गया हो। यू नो, यू नो, वेल, आई नो, एवरीथिंग, बट यू आलसो आट टु नो······यू आलसो आट टु नो······।

[दोनों एक दूसरे की ओर अत्यंतघृणा से देखते हैं।]

यवनिका

समाप्त

आई सी

पात्र, स्थान

पात्र

भूपालसिंह—नायक

महिपालसिंह—भूपालसिंह का बड़ा भाई

जगपालसिंह—भूपालसिंह का छोटा भाई

जामवन्ती – भूपालसिंह की पत्नी

शेरा—भूपालसिंह का ड्राइवर

बटोरा—भूपालसिंह का नौकर

स्थान

एक नगर

स्थान—भूपालसिंह के बँगले का एक कमरा

समय—प्रातःकाल

[कमरे की दीवालें कलई से पुती हैं, जिनमें कई दरवाजे और खिड़कियाँ हैं। कमरा आधुनिक ढंग से सजा है। साधारण फ़रनीचर है। बिजली का फ़िटिंग है। एक आराम कुर्सी पर भूपालसिंह लेटा हुआ अख़बार पढ़ रहा है। भूपालसिंह की उम्र क़रीब पैंतालीस वर्ष की है। वह साधारण क़द और शरीर का गेहुएँ वर्ण का मनुष्य है। सिर के बाल सफेद हो चले हैं। दाढ़ी मूछें मुड़ी हुई हैं। वह खादी का सफेद कुरता और खादी का ही सफेद ढीला पाजामा पहने है। सैल्यूलाइड फ्रेम का बड़ा सा चश्मा लगाये है। शेरा का हाथ में दो छोटे छोटे कागज़ लिये हुए प्रवेश। शेरा लगभग चालीस वर्ष की अवस्था का है। वह ऊँचा-पूरा, मोटा-ताज़ा आदमी है और रंग में साँवला है। छोटी-छोटी मूछें और दाढ़ी है। बाल काले हैं। खाकी रंग का शिकारी कोट और उसी तरह का शार्ट्स पहने है। घुटने तक मोजे और बादामी रंग के जूते हैं। शेरा के आने की आहट पाकर भी भूपालसिंह उसकी तरफ नहीं देखता और उसी तरह अख़बार पढ़ता रहता है। शेरा कुछ देर चुपचाप खड़ा रहता है। एक विचित्र प्रकार की निस्तब्धता रहती है।]

शेरा—सरकार !

भूपालसिंह—(उसी तरह अख़बार पढ़ते हुए) **कौन, शेरा ?**

शेरा—जी, सरकार।

भूपालसिंह—(अखबार से नजर हटाकर शेरा की तरफ़ देख उसके हाथों के कागज़ों को देखते हुए) **आई सी, सुबह हुआ नहीं, और फिर तू बिल लेकर पहुँचा।**

शेरा—(कुछ झुँझला कर) **लेकिन, हुज़ूर, मैं करूं क्या ? बँगले वाले को आज किराया न दिया गया तो उसने कहा है कि वह नोटिस देगा और पेट्रोल वाले ने तो कल से ही पेट्रोल देना बन्द कर दिया है। सरकार, इसी गाड़ी से बाहर तशरीफ़ ले जा रहे हैं, मेरी आफ़त……**

भूपालसिंह—(हाथ के अख़बार को टेबिल पर पटकते हुए क्रोध से गरजकर) तेरी आफ़त ! तेरी क्या आफ़त है बे ? रुपया मुझे देना है या तुझे ? (और ज़ोर से) बँगलेवाला ! पेट्रोलवाला ! फ़रनीचरवाला ! अनाजवाला ! घीवाला ! तरकारीवाला ! दीज़ वालाज़ ! (कुछ रुककर) आई सी ! एक बार मिनिस्टर और हो जाऊँ तब इन सब बदज़ातों को (कुछ रुककर और भी ज़ोर से) चल, हट सामने से···

[भूपालसिंह फिर लेटते हुए अख़बार उठाकर पढ़ने लगता है। शेरा धीरे धीरे बाहर चला जाता है। कुछ देर निस्तब्धता रहती है। एक मनुष्य का धीरे से प्रवेश। उसकी आकृति और वेष-भूषा से वह देहाती किसान जान पड़ता है।]

देहाती—(भूपालसिंह को देखते हुए बड़ी प्रसन्नता से) मिल गये, भगवान, मिल गये। बड़ी मुसक्किल······

भूपालसिंह—(एकदम उठते हुए) आई सी। (चिल्लाकर) लटोरा ! ओ लटोरा ! कहाँ गया हरामज़ादा !

[दौड़ते हुए लटोरा का प्रवेश। वह अधेड़ अवस्था का दुबला-पतला, काले रंग का मनुष्य है। मैले-से कपड़े पहने है।]

भूपालसिंह—अबे, तुझसे इतनी बार कहा कि बिना इत्तला दिये कोई अन्दर न आने पावे और तू ख़याल ही नहीं रखता। मेरा बँगला है, या सराय। लोगों के बैठने के लिए वेटिंगरूम है, पर जब देखो तब हर आदमी धड़धड़ाता हुआ भीतर चला आता है। (ज़ोर से) कहाँ था तू ?

लटोरा—भीतर काम कर रहा था। वहाँ काम न करो तो गाली। यहाँ न बैठूँ तो······

भूपालसिंह—(गरजकर) चुप रह ! ख़बरदार ! ज़बान लड़ाई तो ! देहाती से) आज मुझे ज़रा भी फ़ुरसत नहीं है, महाशय, मैं इसी गाड़ी

से एक आवश्यक मीटिंग के लिए बाहर जा रहा हूँ। वहाँ से लौटने पर आप……

देहाती—(गिड़गिड़ाते हुए) बड़ी विपत में हूँ, भगवान, तहसीलदार ने लगान की वसूली में ढोर-डगर, बरतन-भाँड़े……

भूपालसिंह—तो, भाई, मैं क्या कर सकता हूँ, मैं अब मिनिस्टर थोड़े ही हूँ।

देहाती—(और भी गिड़गिड़ाकर) आप समरथ हैं, भगवान। आपके चाहने भर……

भूपालसिंह—(झुँझलाकर) ओह ! आफ़त आ गयी। कठिनाई यह है कि आप लोग समझते ही नहीं कि……

देहाती—भगवान, हम सब……

भूपालसिंह—(एकदम झुँझलाकर) भाई, मैं इसी गाड़ी से बाहर जा रहा हूँ। इस समय एक मिनिट की भी फ़ुरसत नहीं। (हाथ की घड़ी देखकर) आई सी। गाड़ी जाने को बहुत देर नहीं है। मैंने अभी अख़बार तक नहीं पढ़ा, चाय तक नहीं पी। न जाने अभी क्या क्या करना है। मैंने आपसे कहा न, बाहर से लौटने पर……

देहाती—पर तब तक तो, भगवान, मेरा सरबस नीलाम हो जायगा।

भूपालसिंह—(आगबबूला होकर) तो मैं क्या कर सकता हूँ ! (फिर से कुर्सी पर बैठते हुए) इस समय सिर न खाइए।

लटोरा—(देहाती को हाथ से बाहर ठेलते हुए) चलो, चलो, फिर आना।

[लटोरा देहाती को बाहर ले जाता है, जो अत्यन्त दुःखित मुद्रा से बाहर जाता है। भूपालसिंह फिर कुर्सी पर लेटकर अख़बार पढ़ने लगता और 'आई सी, आई सी' कहता है। कुछ देर निस्तब्धता रहती है। लटोरा का एक कागज का चिट लिए हुए प्रवेश।]

लटोरा—सरकार ! (कागज का चिट देता है ।)

नेपथ्य से—अरे ! भाई ! जब मिनिस्टर थे तब भी मुझे तो नाम नहीं भेजना पड़ा, इत्तला देकर अन्दर आने की आवश्यकता न पड़ी। यह नया क़ायदा······

भूपालसिंह—(चिट देखकर उठते हुए) आई सी। (लटोरा से) अबे उल्लू के पट्ठे ! यह किसे रोक दिया ?

लटोरा—आपने ही तो कहा था कि बिना इत्तला दिये किसी को भी······

भूपालसिंह—(बाहर जाते हुए) अक्ल के दुश्मन ! आदमी भी तो देखना चाहिए। (बाहर जाता है।)

लटोरा—(अपने आप) मैं तो लटुर गया। बिलकुल लटुर गया। अकेला मैं बाहर से लटुरते लटुरते भीतर ; भीतर से लटुरते लटुरते बाहर। ऊपर से गालियाँ। माँ बाप ने लटोरा नाम जनम की साइत देख कर, समझ बूझ कर, रक्खा था। (बाहर जाते जाते) ना, बाबा ! ऐसी नौकरी नहीं···आज ही······

[भूपालसिंह का एक मनुष्य के साथ प्रवेश। आगन्तुक लगभग तीस वर्ष का, गोरे रंग का, कुछ ऊँचा और मोटा-सा व्यक्ति है। नोकफटी मूँछें हैं। अंग्रेजी लिबास है।]

भूपालसिंह—क्षमा कीजिए, कुमार साहब, नौकर ने बड़ी बदतमीज़ी की।

कुमार—(मुस्कराते हुए) कोई बात नहीं, उसने पहचाना नहीं।

[दोनों कुर्सियों पर बैठ जाते हैं।]

भूपालसिंह—हाँ, इधर आप बहुत समय से आये नहीं और ऐरे-गैर-पचकल्यान इतने आते हैं कि अगर बिना इत्तला दिये सब को आने दिया जाय तो यहाँ सदा मेला ही लगा रहे

कुमार—भाई, मिनिस्टर रहे हो, या कोई मज़ाक है।

भूपालसिंह—(मुस्कराकर) आई सी ! पर, भाई, जब मिनिस्टर था, तब था, अब तो नहीं हूँ।

कुमार—पर लोग जानते हैं कि फिर होगे और जल्दी ही।

भूपालसिंह—ऊँह, यह कौन कह सकता है। (ज़ोर से) लटोरा ! ओ लटोरा !

[लटोरा का दौड़ते हुये प्रवेश।]

भूपालसिंह—जल्दी चाय ला।

[लटोरा का प्रस्थान।]

कुमार—पर, क्यों, भाई, आप क्या समझते हो काँग्रेस ने मिनिस्टरी छोड़ कर ठीक काम किया ?

भूपालसिंह—आई सी। आप मुझसे काँग्रेस के निर्णय के खिलाफ़ कुछ कहलाना चाहते हैं। कुमार साहब, इस सम्बन्ध में मैं कुछ नहीं कह सकता। हम लोगों का काम सिपाही के सदृश आज्ञा मानना है।

कुमार—आप इस सम्बन्ध में कोई राय रखते ही नहीं, या प्रकट नहीं करना चाहते ?

भूपालसिंह—राय तो सभी रखते। हम लोग क्या मूर्ख हैं कि कोई राय ही नहीं रखें, परन्तु अपनी-अपनी राय रखते हुए भी हम सच्चे शिष्तवादी हैं।

कुमार—शिष्त ! ठीक, काँग्रेस में शिष्त की सचमुच आजकल बड़ी चरचा सुनायी दे रही है। (कुछ रुककर) इस विषय में एक बात पूछूँ ?

भूपालसिंह—हाँ, हाँ, आपको हर विषय में सवाल करने का अधिकार है।

कुमार—(मुसकराते हुए) और जनाब जनाब दें या न दें, यह आपके अधिकार की बात है।

भूपालसिंह—(मुसकराते हुए) अवश्य। (कुछ रुककर जोर से) लटोरा! ओ लटोरा! इतनी देर!

नेपथ्य से—अभी आया।

कुमार—जल्दी क्या है, और फिर मुझे तो चाय पीने की आदत भी नहीं है।

भूपालसिंह—पर मुझे जल्दी है, भाई, इसी गाड़ी से बाहर जा रहा हूँ।

कुमार—अच्छा!

भूपालसिंह—हाँ, एक मीटिंग के लिए जाना है।

कुमार—तब तो मुझे ज्यादा टाइम नहीं लेना चाहिए।

भूपालसिंह—(हाथ की घड़ी देखते हुए) नहीं, नहीं, अभी बहुत वक्त है।

[लटोरा का रकाबी में चादानी, दूधदानी और शक्करदानी के साथ दो प्याले और सासर लिये हुए प्रवेश। वह टेबिल पर रकाबी रखता है।]

भूपालसिंह—आई गो! नाश्ता नहीं लाया।

लटोरा—अभी तैयार नहीं है।

कुमार—भाई, मुझे इस वक्त कुछ भी खाने की आदत नहीं है। नाश्ता तो मैं बिल्कुल नहीं कर सकता।

भूपालसिंह—(लटोरा से) अच्छा, जा जा, पान ला।

[लटोरा का प्रस्थान, भूपालसिंह चाय बनाना शुरू करता है।]

कुमार—मैं आपसे कांग्रेस की शिस्त के सम्बन्ध में एक बात पूछने वाला था।

भूपालसिंह—(चाय बनाते हुए) एक नहीं, जितनी पूछना चाहें, पूछिए।

[आगे के सम्भाषण में दोनों चाय भी पीते हैं।]

कुमार—कांग्रेस की शिस्त देश-भक्ति के कारण है, या अपनी भक्ति के सबब?

भूपालसिंह—(कुमार की ओर देखते हुए) मैं आपका मतलब नहीं समझा।

कुमार—मतलब साफ़ है, भाई, जिस अनुशासन की आप दुहाई देते हैं वह अनुशासन इसलिए है कि अगर आप उसे न मानें तो कांग्रेस में आपकी कोई जगह ही न रहे। बिना कांग्रेसी हुए आपको पूछे कौन? यह मेम्बरी, मिनिस्ट्री वगैरह न मिले।

भूपालसिंह--और जो मेम्बर, मिनिस्टर इत्यादि नहीं हैं, वे कांग्रेस की शिस्त क्यों मानते हैं?

कुमार—भविष्य में मेम्बर, मिनिस्टर आदि होने के लिए।

भूपालसिंह—और जो कभी भी होना नहीं चाहते, वे?

कुमार—ऐसे शायद ही कुछ हों, और जो होंगे, वे अधिकार, भक्ति या वाहवाही के लिए।

भूपालसिंह—तो आपको कोई निस्वार्थी कांग्रेस में नहीं दिखता?

कुमार—ऐसा तो मैं नहीं कहता, पर ज्यादातर खुदगर्ज़ ही हैं।

भूपालसिंह—आप कोई ऐसी संस्था बता सकते हैं, जो आपकी व्याख्या के मुताबिक़ सिर्फ़ निस्वार्थियों से भरी हो।

कुमार—कोई नहीं। भाई, निस्वार्थता शब्द ही कोष में से निकाल देना चाहिए। मैं तो यह कहता हूँ, भगवान का भजन भी स्वर्ग लोक प्राप्ति के लिए या मोक्ष के लिए किया जाता है।

भूपालसिंह—आई सी, तब फिर आपका सवाल ही नहीं उठता।

कुमार—नहीं, उठता है।

भूपालसिंह—कैसे ?

कुमार—ऐसे कि कांग्रेस वाले शिस्त की दुहाई देश-भक्ति और स्वार्थ-त्याग के नाम पर देते हैं। हर कांग्रेस वाला कहता है कि जो कुछ वह करता है दूसरे के लिए, उसका उसमें कोई स्वार्थ नहीं है। मेरा यह कहना है कि कांग्रेस खुदगर्ज़ों की एक जमात है, जो अपने स्वार्थ के लिए शिस्त के बन्धन में बँधे हुए हैं और लोगों को धोखा देने के लिए उस अनुशासन को देश-भक्ति, त्याग वगैरह बड़े बड़े विशेषणों से भूषित किये हुए हैं। जिन्हें यकीन हो गया है कि इस शिस्त के पालन करने पर भी कांग्रेस में अब उनका कोई स्थान नहीं रह सकता, कोई स्वार्थ हासिल नहीं हो सकता, वे कांग्रेसी उस अनुशासन को तोड़ने में सबसे आगे होते हैं।

भूपालसिंह—(मुसकराते हुए) आई सी, आई सी। आज तो आप कांग्रेस से अज़हद नाराज़ मालूम होते हैं। कांग्रेस को गालियाँ देने का संकल्प करके ही शायद घर से निकले हैं।

कुमार—बेशक मैं कांग्रेस से नाराज़ और अज़हद नाराज़ हूँ। जनाब, लड़ाई के इस अवसर पर कांग्रेस ने प्रान्तीय कैबिनेटों से अलग होकर, थोड़े से आदमियों के क्लिक के अनुसार चलकर, शिस्त की दुहाई देकर, समूचे देश के हितों को हलाल किया है। आप लोग कैबिनेट में रहते, वहाँ अड़ंगा नीति का अवलंबन करते तो देश को पूर्ण स्वाधीनता न भी सही डुमीनियन स्टेटस तो अब तक अवश्य मिल गया होता।

भूपालसिंह—इस सम्बन्ध में बहुत से लोग आपकी राय के हैं, यह मैं जानता हूँ।

कुमार—कांग्रेसी भी।

भूपालसिंह—शायद यह भी ठीक है, परन्तु एक इस बात के कारण कांग्रेस संस्था धोखेबाज़ों की एक जमात तो नहीं मानी जा सकती। कांग्रेस में स्वार्थी नहीं हैं, यह मैं नहीं कहता, लेकिन इसी के साथ आपको यह भी मानना होगा कि जितने त्यागी आज कांग्रेस में हैं, उतने देश की किसी भी दूसरी संस्था में नहीं।

कुमार—परन्तु मिनिस्ट्री छोड़ कर कांग्रेस ने गल्ती की है, यह तो आप भी मानते हैं न?

भूपालसिंह—(गम्भीरता से) शायद आपका कहना ठीक है।

कुमार—(चाय पीना खतम कर, खड़े हो, झुक कर तीन सलाम करते हुए) आदाब अर्ज़ है। आदाब अर्ज़ है। कहिए, इस सम्बन्ध में आपकी क्या राय है, यह तो कुमार ने ज़ाहिर करा लिया न? (मुसकराते हुए) अच्छा, अब आज आज्ञा दीजिए। आपकी गाड़ी का वक्त हो रहा है।

भूपालसिंह—(खड़े होकर) पान तो खाते जाओ, भाई। (ज़ोर से) लटोरा! ओ लटोरा!

नेपथ्य से—पान लाता हूँ।

भूपालसिंह—(मुसकराते हुए) हाँ, आपने मेरी तो मिनिस्ट्री के सम्बन्ध में राय ज़ाहिर करा ली, पर आपकी राय कॉंग्रेस एज़ ए होल की बाबत बदली या नहीं?

[लटोरा का चाँदी की तश्तरी में पान लिए हुए प्रवेश। वह तश्तरी टेबिल पर रख कर जाता है।]

कुमार—(पान उठा कर खाते हुए) वह फिर कभी बताऊँगा। (हँसते हुए बाहर जाने लगता है।)

भूपालसिंह—(पान उठा कर खाते और मुसकराते पीछे-पीछे जाते हुए) आई सी, आई सी। बड़े चालाक हो।

[भूपालसिंह लौट आता है

भूपालसिंह—(ज़ोर से) लटोरा !

[लटोरा का दौड़ते हुए प्रवेश ।]

भूपालसिंह—जामवन्ती को बुला ।

[लटोरा का प्रस्थान । भूपालसिंह इधर उधर टहलता है । जामवन्ती का प्रवेश । उसकी उम्र करीब चालीस वर्ष की है । गेहुएँ रंग की ठिगनी और मोटी औरत है । चौड़ी काली किनार की सफ़ेद साड़ी और इधर उधर झालर लगा हुआ छींट का शलूका पहने है । थोड़े से सोने के आभूषण हैं ।]

भूपालसिंह—(जामवन्ती को देखकर गरज कर) जामवन्ती ! जामवन्ती ! तुम मेरी नाक जड़ से कटाये बिना न मानोगी । (और ज़ोर से) नाश्ता क्यों नहीं भेजा ?

जामवन्ती—घी हो तो नास्ता बने ।

भूपालसिंह—(पैर पटक कर) यह सब तो मैं बहुत दिनों से सुन रहा हूँ ; सुनते-सुनते बहरा होता जाता हूँ, बहरा ! घी नहीं था ! फलाँ चीज नहीं थी ! कैसे भी मँगाती ! कहीं से भी मँगातीं ।

जामवन्ती—पर बिना पैसे कैसे मगाती ? कहाँ से मँगाती ? अब तो कोई उधार भी नहीं देता ।

भूपालसिंह—(दाँत पीस कर जामवन्ती के निकट जाते हुए) पैसे नहीं थे, कोई उधार नहीं देता था, तो ज़ेवर रहन करके मँगाती, बेच कर मँगाती मेरी इज्ज़त मिट्टी में मिल गयी तो इन ज़ेवरों से शोभा न रह जायगी । शर्म नहीं आती ! पत्नियों ने पतियों के लिए क्या-क्या किया है; इतिहास देखो, इतिहास !

जामवन्ती—पति के पास आने वाले मुफतखोरों को नास्ता कराने के लिये किसी पत्नी ने अपने गहने रहन किये या बेचे, यह कम से कम मैंने किसी इतिहास में नहीं पढ़ा ।

भूपालसिंह—(क्रोध से गरज कर) तू जामवन्ती है, सच्ची जामवन्ती! तेरा बाप भी शायद जामवन्त होगा, सच्चा जामवन्त!

जामवन्ती—हो सकता है, पर आप भगवान कृष्ण हैं, यह मैं नहीं मानती।

[जामवन्ती का शीघ्रता से प्रस्थान। भूपालसिंह क्रोध और बेचैनी से इधर उधर टहलता है। कुछ देर निस्तब्धता रहती है।]

भूपालसिंह—(हाथ की घड़ी देखकर) आई सी। (ज़ोर से) लटोरा! ओ लटोरा!

[लटोरा का दौड़ते हुए प्रवेश।]

भूपालसिंह—बड़े भैया से कह कि सफ़र-खर्च का रुपया मँगाया है।

[लटोरा का प्रस्थान। भूपालसिंह उसी प्रकार इधर उधर टहलता रहता है। महिपालसिंह का प्रवेश। महिपालसिंह की अवस्था लगभग पचपन वर्ष की है। रंग साँवला पड़ गया है। सिर और छोटी मूछों के बाल सफ़ेद हो गये हैं। वह मिल के कपड़े का सफ़ेद कुरता और धोती पहने हैं।]

महिपालसिंह—बहुत प्रयत्न करने पर भी सेकिंड क्लास के किराये का रुपया इकट्ठा न हो सका।

भूपालसिंह—(घड़ी देखते हुए) आई सी। पर यह आप अब कह रहे हैं, जब गाड़ी जाने में आधे घंटे से भी कम बाकी है।

महिपालसिंह—अभी तक कोशिश करता रहा, भइया।

भूपालसिंह—(लंबी साँस लेकर) आई सी। पर अब तो इतना कम वक्त है कि मैं कहीं से कर्ज़ भी नहीं मँगवा सकता।

महिपालसिंह—अगर थर्ड में चले जाओगे तो कोई हर्ज़ हो जायगा?

भूपालसिंह—(पैर पटक कर) आई सी, आई सी। तो मुझे थर्ड में

सफ़र कराना है, इसीलिए आपने इन्तज़ाम नहीं किया, यह आप क्यों नहीं कहते ?

महिपालसिंह—(एक कुरसी पर बैठते हुए) भैया, तुम कैसी बात कर रहे हो ?

भूपालसिंह—(टहलते हुए लम्बी साँस लेकर) मैं वैसी ही बात कर रहा हूँ, जैसी करनी चाहिए।

महिपालसिंह—(दृढ़ता से) हर्गिज़ नहीं, तुम ऐसी बात कर रहे हो, जैसी तुम्हें नहीं करनी चाहिए। जब पिता जी गये तब तुम्हारी उम्र दस वर्ष से ज़्यादा न होगी। तब से अब तक मैंने तुम्हारे लिए क्या नहीं किया कि जो तुम्हारे मन में मेरे लिए ऐसा शक होता है, तुम्हारे मुँह से मेरे लिए ऐसी बात निकलती है ? (आँखों में आँसू भर आते हैं।)

भूपालसिंह—(टहलना बन्द कर, खड़े होकर) भाई साहब, आपने अगर मेरे लिए सब कुछ किया, तो मैंने कौन सा बुरा काम किया ? मैंने भी आपकी, आपके वंश की प्रतिष्ठा ही बढ़ायी है। इतना ही नहीं, उँचे से ऊंचे पद पर बैठ कर इस पद का भी गौरव बढ़ाया है। मेरी बुद्धि की, ईमानदारी की दुश्मन तक तारीफ़ करते हैं। मेरे चरित्र की तरफ़ कोई उँगली तक नहीं उठा सकता है। पर ···· कुछ रुककर) पर कल मैं मिनिस्टर था, फर्स्ट क्लास में चढ़ा-चढ़ा फिरता था, कभी कभी सैलून में भी, मेरे साथ गोरे सेक्रेटरी, कैम्पक्लार्क चलते थे, वरदियाँ लगाये हुए चपरासी घूमते थे, और आज ही मैं थर्ड क्लास में मारा-मारा भटकूँ, यह ···यह···क्या ठीक बात है ?

महिपालसिंह—तभी गाँधी जी ने कहा था कि कांग्रेस मिनिस्टरों को थर्ड क्लास में यात्रा करनी चाहिए; एक दम सादगी से रहना चाहिए। पाँच सौ रुपया महीना तनख्वाह का यही मतलब था। यह मतलब नहीं था कि वेतन तो हो पाँच सौ और बँगला हो सिविल स्टेशन का सबसे बड़ा, सबसे अच्छा सजा हुआ। मोटर हो ऐसी कि चाहे एक गैलन पैट्रोल

में दस मील ही चले। (कुछ रुककर) भैया, कांग्रेस सरीखी संस्था में रहने वालों की यह शाहंशाही नहीं निभ सकती। आज मिनिस्ट्री है तो कल स्वयं सेवकी। हम थाड़ी सी ज़मीन जोतने वाले, अपनी सेवा के कारण चाहे मिनिस्टर नहीं लाट साहब हो जायँ पर इस तरह की रहन-सहन से नहीं रह सकते। यह बँगला, यह मोटर, यह चाय और टिफन, यह फ़र्स्ट और सेकिंड क्लास की यात्राएँ! भैया यह मिथ्या जीवन है, मिथ्या। जहाँ सचाई नहीं है, वहाँ दुःख ही होगा; सुख नहीं हो सकता। जहाँ···

[जगपालसिंह का प्रवेश। उसकी उम्र करीब पैंतीस वर्ष की है। वह गेहुएँ रग का, ठिगना और मोटा आदमी है। वस्त्र यद्यपि खादी के हैं, पर अंगरेजी ढंग के।]

जगपालसिंह—(भूपालसिंह से) भाई साहब रेडियो में अभी ख़बर आयी है। महात्मा जी, वाइसराय से मिलने शिमला जा रहे हैं।

भूपालसिंह—(प्रसन्नता से) आई सी, आई सी। (कुछ रुककर) इस दफ़ा समझौता ज़रूर हो जायगा।

जगपालसिंह—और न हुआ तो सत्याग्रह होगा।

भूपालसिंह—कुछ तो हो (घड़ी देखकर) आई सी। (महिपालसिंह से) भाई साहब, इस एक यात्रा के सेकिंड क्लास की टिकट का भी आप इन्तज़ाम नहीं कर सकते?

महिपालसिंह—अगर कर सकता तो तुम्हें इतने कहने की ज़रूरत पड़ती?

भूपालसिंह—(जगपालसिंह) अच्छा, जगपाल, ड्राइवर से कह दो, मैं शाम की गाड़ी से जाऊँगा।

[जगपालसिंह का प्रस्थान। भूपालसिंह इधर उधर टहलता है। महिपालसिंह भूपालसिंह की ओर देखता है।]

भूपालसिंह—(अपने आप) आई सी, आई सी।

महिपालसिंह—मिनिस्ट्री देख रहे हो, भैया ?

भूपालसिंह—(उसी प्रकार घूमते हुए) दो में से एक कुछ भी।

महिपालसिंह—याने ?

भूपालसिंह—मिनिस्ट्री या जेल।

महिपालसिंह—तो कांग्रेस की ओर से रहा हुआ मिनिस्टर दो बातों के सिवा कोई तीसरी बात देख ही नहीं सकता ?

भूपालसिंह—(उसी प्रकार घूमते और विचारते हुए) आई सी, आई सी।

यवनिका

समाप्त

—:०:—

फ़ाँसी

पात्र, स्थान

पात्र

कवि

पूँजीपति

मज़दूर

स्थान

जेल का एक गुनह-ख़ाना

स्थान—गुनहख़ाना

समय—रात्रि का तीसरा पहर

[गुनहख़ाना के तीन तरफ़ की पत्थर की दीवालें दिखती हैं। बायीं ओर की दीवाल के ऊपर की तरफ़ एक सींखचा लगी हुई खिड़की है और दाहनी तरफ़ की दीवाल में एक लोहे का दरवाज़ा। दरवाज़ा बन्द है। फ़र्श पर कब्रों के सदृश तीन लम्बे लम्बे चौतरे हैं। इन पर जेल के बिछौने बिछे हैं। तीनों चौतरों पर कैदियों के कपड़े पहने हुए कवि, पूंजीपति और मज़दूर बैठे हैं। कवि गौर वर्ण, पूंजीपति गेहुँयें रंग और मज़दूर कुछ साँवले रंग का है। तीनों की अवस्था लगभग तीस वर्ष की है।

कवि—हां, हां. पूँजीपति की और श्रमजीवी की, सृष्टि एक ही तत्व है।

पूँजीपति—एक ही तत्व है!

कवि—सर्वथा! और वह कैसा है, जानते हैं!

मज़दूर—कैसा?

कवि—वह सत्य है, शिव है, सुन्दर है। अनेक रूपों में परिणत होकर वह अपनी सुन्दरता बढ़ाता है। आकाश में सूर्य, चन्द्र, अगणित तारे; फिर कभी-कभी उठने वाले बादल, उनके भिन्न भिन्न रूप, अलग-अलग रंग। उनमें बिजली, इन्द्र-धनुष, कभी-कभी धूप में बरसती हुई फुहार और उसमें भी इन्द्र-धनुष के-से रंग। सागर में बड़ी छोटी लहरें, उसका फेन और चाँदनी में उसकी चमक। नित्य उषा और सन्ध्या। परिवर्तन होती ऋतुएँ—विशेषकर वर्षा और वसन्त। पर्वत, वन, नदियाँ, निर्झर, तड़ाग। कभी लहराते हरे-हरे खेत, कभी नवपल्लवों तथा कुसमों के गुच्छों एवं फलों से युक्त डोलते वृक्ष। फिर जीवसृष्टि—चौकड़ी भरते मृग जुगनुएँ और वीरबहूटियाँ, नाना भाँति के गाते हुए विहग और पानी में

भाँति-भाँति की तैरती हुई मछलियाँ। इन सबसे श्रेष्ठ मनुष्य—उसके श्रेष्ठतम कलात्मक कार्य—विशाल मूर्तियाँ, ललित चित्र, सुन्दर संगीत और सर्व श्रेष्ठ काव्य; और ये हमारे कार्य यदि किसी इष्ट को सामने रख कर किये जायँ।

मज़दूर—तब तो पूछना ही क्या है ?

कवि—बशर्ते वह इष्ट सुन्दर हो। स्त्री के लिए पुरुष और पुरुष के लिए स्त्री ! मेरा वह इष्ट कितना सुन्दर था !

मज़दूर—बहुत सुन्दर था, कवि जी ?

कवि—ओह ! क्या कहूँ। अरे ! इस एक तत्त्व ने उस शरीर में अनेक रूप में परिवर्तित हो सारी सृष्टि के सौन्दर्य का उसे प्रतीक बना दिया था। उसमें क्या नहीं था ? आकाश की विशालता थी। समुद्र की तरंगें थीं। तारों के स्थान पर चमकते हुए भूषण थे। बादलों के सदृश रंग बदलते हुए वह कपड़े पहनती थी। उदय और अस्त होते हुए सूर्य की ही नहीं, चन्द्र की भी उसके मुख में आभा थी। जैसी ऋतु आती, वैसी वह हो जाती। वर्षा में वृक्ष पर झूलती हुई वह इन्द्र-धनुष सी जान पड़ती और बसन्त में कुसुम-क्यारियों में केलि करती हुई उन कुसुमों के, सार के सदृश। चौकड़ी भरते मृगों और कलोल करती हुई मछलियों के समान उनके नेत्र थे। बीरबहूटी और जुगनू उसके ललाट पर लगी हुई ईंगुर की टिकली तथा उसके चारों ओर की केसर पर बुरकाये हुए रुपहरी बादल में दिख जाती थीं। गाते हुए विहगों के सदृश उसकी बोली के भिन्न-भिन्न स्वर थे। मैंने उसकी मूर्तियाँ बनायी थीं, चित्र बनाये थे उसी के गीत गाता था, उसी पर काव्य लिखता था।

पूँजीपति—ऐसी सुन्दर स्त्री के लिए किसी भी सहृदय कवि का यह करना स्वाभाविक ही था।

कवि—सर्वथा, और इसके बाद एक बात और स्वाभाविक थी।

पूँजीपति—कौनसी ?

कवि—अन्त में एकीकरण का प्रयत्न। विप्रलंभ क्या सदा विप्रलंभ रह सकता है ? विप्रलंभ के बाद संयोग की इच्छा क्या अस्वाभाविक है।

पूँजीपति—कदापि नहीं, कदापि नहीं।

कवि—वही हुआ। संयोग के नाना प्रयत्न किये पर…

मज़दूर—पर इसमें सफलता नहीं मिली; क्यों ?

कवि—हाँ, नहीं मिली, और जब सफलता नहीं मिली तब जो कुछ किया वह भी स्वाभाविक था।

पूँजीपति—याने ?

कवि—बलात्कार ! मेरे लिए तो प्रलय का अवसर आ रहा था, प्रलय का। यौवन का प्रलय ही यथार्थ में जीवन का प्रलय है। प्रलय के समय समुद्र बलपूर्वक ही तो पृथ्वी को अपनी लहरों से दबोचता है। मैंने वही किया और क्या ? उसे मार तो डाला डाक्टरों ने अस्पताल में, इस पर मुझे फाँसी ? (लम्बी साँस लेकर) क्या…क्या कहूँ ? कैसा ..कैसा यह क़ानून है ?

पूँजीपति—कवि जी, मुझे फाँसी हुई है पूँजी के कारण। पूँजी और फाँसी ! अरे ! जो विश्व की सारी हलचलों का साधन है, वह फाँसी का कारण ! जीवन से मरण !

कवि—हाँ हाँ, आश्चर्य, महान आश्चर्य की बात है।

मज़दूर—ऐसा ?

कवि—इसमें भी कोई सन्देह है ?

पूँजीपति—अजी पूँजी के बिना इस संसार में क्या हो सकता है ? संसार के सभी बड़े-बड़े आविष्कार और कलाओं का निर्माण पूँजी से हुआ है, होता है, और होता रहेगा। अपनी पूर्व-जन्म की संचित पूँजी से पूर्व-जन्म के पुण्यात्मा और तपस्वी इस जन्म में पूँजीपति होते हैं, और फिर भी ये कैसे कल्याणकारी कार्य करते हैं ?

कवि—हाँ, हाँ, विश्व-हित के एक नहीं. अगणित कार्य।

पूँजीपति—अवश्य, कवि जी। शिक्षा के लिए दान देते हैं, जिससे नयी-नयी चीज़ों के निर्माण-कर्ताओं का निर्माण होता है। फिर जहाँ ये निर्माण-कर्त्ता निर्माण करते हैं, उन संस्थाओं को पूँजीपति ही तो स्थापित करते हैं। कला के उत्कर्ष के लिए भव्य-भवन बनवाते हैं, मूर्तियाँ बनवाते हैं, चित्र बनवाते हैं। संगीत और कवियों को प्रोत्साहन देते हैं।

कवि—अवश्य, अवश्य।

पूँजीपति—अरे! सरकार भी अगर कोई अच्छा काम करती है, तो उसका श्रेय भी इन्हीं को तो है। यथार्थ में सरकार इन्हीं की तो प्रतिनिधि है। इनसे गाँवों की किश्त न मिले, इनको आमदनी पर इनकमटैक्स न प्राप्त हो, तो सरकार क्या कर सकती है! फिर इनके मन्दिर, इनकी धर्मशालाएँ। (कुछ रुककर) इन पूँजी को सदा बढ़ाते रहना ही संसार का सबसे महान् धर्म तथा इसमें जो बाधाएँ आवें उनका निराकरण सबसे बड़ा कर्त्तव्य कर्म है।

मज़दूर—ऐसा?

कवि—(मजदूर की ओर देखकर) इसमें कोई सन्देह है?

पूँजीपति—कवि जी, मेरे कारख़ाने में हड़ताल हुई। बोलिए, उस हड़ताल को कैसे चलता रहने दे सकता था? मज़दूरों को समझाया बुझाया, सभी तो किया; पर जैसे जैसे समझाया, उनका मिज़ाज बढ़ता ही गया; आखिर जब वे मार-काट पर उतारू हो गये तब मेरी पिस्तौल मारने के लिए नहीं, उन्हें भय दिखाने को चली, जिससे निर्माण में कार्य-बाधा न पहुँचे। कुछ गोलियाँ चल गयीं। मज़दूरों को हथियारों के लाईसेन्स न मिलकर जो पूँजीपतियों को मिलते हैं, वह आख़िर काहे के लिए? पूँजी के बढ़ाने के महान् धर्म और उसके मार्ग की बाधाओं के निवारण के कर्त्तव्य कर्म में यदि इन शस्त्रों का उपयोग नहीं हो सकता तो ये निरर्थक हैं। कीड़ों मकोड़ों के सदृश एक मज़दूर मर गया। (मज़दूर की त्योरी चढ़

जाती है।) अरे ! वह तो पुण्य था, मेरे जीवन का सबसे बड़ा पुण्य-कार्य। उस पर मुझे फाँसी। वाह रे क़ानून ! मेरी और उसकी एक ही औक़ात ?

मज़दूर—पर, पूँजीपति जी, बिना काम किये दुनियाँ में क्या हो सकता है ? संसार के बड़े-बड़े आविष्कार और कलाओं का विकास यथार्थ में पूँजी का नहीं, मेहनत का फल है। पूर्वजन्म थोथी कल्पना है, और पूर्व जन्म के कर्मों से अच्छे और बुरे जन्म होते हैं, यह पूँजीवाद को क़ायम रखने के लिए जनता को एक झूठे सिद्धान्त का पाठ पढ़ाना तथा धोखा देना है।

पूँजीपति—धोखा ! इतने ज्ञानी और विचारशीलों का मत धोखा !

मज़दूर—हाँ, हाँ. धोखा और बड़े से बड़ा धोखा ! दुखियों के दुख उनके पूर्व जन्म के कर्मों के फल है, अत: उसके सुधार का यत्न फ़िजूल का काम है, यह सिद्ध करने को पूर्व जन्म, और उस जन्म के कर्म के सिद्धान्त से सुन्दर अन्य कोई सिद्धान्त न निकाला जा सकता था। विश्व का सच्चा हित दान के धन से नहीं हो सकता वह सरकारी अधिकार से होता है। यह तब जब कि सरकार काम करने वालों की सरकार रहे और उत्पत्ति तथा उत्पन्न की हुई सपत्ति का बटवारा काम करने वालों की प्रतिनिधि उस सरकार के हाथ में हो। महान् आविष्कार और कलाएँ ही नहीं, संसार का सुख ही इस पर निर्भर है। एक मनुष्य सुखी और हज़ारों, लाखों, करोड़ों दुखी हों, यह सामाजिक संघठन तो अस्वाभाविक चीज़ है, और अस्वाभाविक चीज़ सदा थोड़े ही चल सकती है। जो पूँजी-वाद अगणितों के दुख को कायम रख, कुछ के सुख का निर्माण करता है, उसका नाश ही सबसे बड़ा धर्म और इस काम में जो बाधाएं आवें उनका निवारण ही सबसे बड़ा कर्म है।

पूँजीपति—हरि, हरि, हरि, शिव, शिव, शिव !

मज़दूर—मैंने एक ऐसे आदमी का अन्त कर दिया। मुझे क्यों फाँसी हो! होनी तो नहीं चाहिए थी, पर इस समय के क़ानून ..

[दरवाज़ा खुलने की आवाज़]

कवि—तो···तो · अब वक़्त आ गया। हाय! हाय! अब वह आकाश, वह चाँदनी, वह जीव सृष्टि; और···और··· वह गयी तो गयी··· उसी के सदृश किसी दूसरी को ढूंढता, सब···सब चले। अरे! पतझड़ वसन्त के पहले होती है, जीवन के इस वसन्त के बीच यह पतझड़ कैसा? प्रलय तो सृष्टि के पूर्व विकास के बाद आता है। मेरा तो यौवन अभी विकसित हो रहा था। यह प्रलय कैसा? हाय! हाय! यह अन्याय वह ज़ुल्म।

पूँजीपति—अभी तो न जाने मेरे कितने काम बाक़ी हैं? मध्यभारत का पुतली घर अभी अधूरा पड़ा है। बिहार का शक्कर मिल इसी साल में चलना शुरू हुआ है। यू॰ पी॰ के काग़ज़ मिल की अभी तो नींव पड़ी है। न जाने कितना···कितनी फैक्टरियाँ और कितने··· कारख़ाने बनाने थे। लेक रोड के मकान की नींव खुद रही है। हिन्दुस्तान के अच्छे से अच्छे शिल्पी को वह काम सौंपा है। उसकी चित्रकारी की व्यवस्था बाक़ी है। नरनरायण के मन्दिर की प्रतिष्ठा शेष है। हरिद्वार की धर्मशाला का उद्यापन होना है।

मज़दूर—कवि जी, आपको क्यों दुख हो रहा है? सृष्टि एक ही तत्व है। उसी में तो आप मिलियेगा। यह तो बन्धन मुक्ति है। और, पूँजीपति जी, आपको भी दुख नहीं होना चाहिए। पूर्व जन्म के अच्छे कर्मों के फल स्वरूप ही तो पूँजीपति के घर में जन्म होता है। आपने मन्दिर बनाये हैं, धर्मशालाएँ बनवायी हैं, अपने जीवन का सबसे बड़ा पुण्य कार्य आपने एक मज़दूर की हत्या, करके किया है। आपका नया जन्म तो और अच्छा होगा। दुख तो मुझे होना था। पर जानते हैं, मुझे हर्ष है। एक ख़ून चूसने वाले का ख़ून कर मैंने तो यह जन्म सफल कर लिया।

फाँसी न होती तो अच्छा था। पृथ्वी का भार और घटाता, पर ख़ैर इतना ...इतना ही सही।

[लोगों के आने की आहट होती है]

कवि—अरे! सारे भारतवर्ष के कलाकारों ने मुझे सबसे बड़ा उदीयमान कवि मान मुझे क्षमा करने के लिए दरख़्वास्त दी थी। शायद ...शायद मुझे छोड़ने के लिए ये लोग आ रहे हों?

पूँजीपति—और...और मेरे बचाने के लिए न जाने कितना धन ख़र्च किया जा रहा है। शायद...शायद मुझे भी छोड़ने के लिए।

[गुनहख़ाना का दरवाज़ा खुलता है। वरदी पहने हुए जेलर का कुछ वार्डरों के साथ प्रवेश।]

जेलर—तैयार...तैयार...हो जाओ, तुम लोग ईश्वर को याद करो।

[कवि शून्य और कातर दृष्टि से सामने की ओर देखता है। पूँजीपति रोता है। और इन दोनों को देखकर मजदूर कहकहा लगा कर हँसता है।]

यवनिका

समाप्त

—:०:—

भूख-हड़ताल

पात्र, स्थान

पात्र

परमेश्वर दयाल—एक सत्याग्रही कैदी

राधारमण—एक सत्याग्रही कैदी

मेजर क्राफ्टन—जेल सुपरेन्टेन्डेन्ट

डाक्टर खान—जेल का डाक्टर

जेलर

नरोत्तम प्रसाद—जिला कांग्रेस कमेटी का सभापति

स्थान

एक नगर

स्थान—जेल में परमेश्वर दयाल का गुनहखाना

समय—मध्याह्न

[गुनहखाने के तीन तरफ की पत्थर की दीवालें दिखाई पड़ती हैं । बायीं ओर की दीवाल के ऊपरी हिस्से में सींखचा लगी हुई खिड़की है ; और दाहनी तरफ की दीवाल में एक लोहे का दरवाजा । दरवाजा खुला है और उससे गुनहखाने के के बाहर के बरामदे का कुछ हिस्सा दिखायी देता है । गुनहखाने में एक लोहे का पलंग, एक मेज और एक कुर्सी के सिवा अन्य कोई फरनीचर नहीं है । लोहे के पलंग का काला रंग अनेक स्थानों पर उखड़ गया है । मेज और कुर्सी मद्दी सी बनी है और इधर उधर टूटी हुई है । पलंग पर जेल के बिस्तर हैं और उस पर परमेश्वर दयाल लेटा है । परमेश्वर दयाल की अवस्था करीब तीस वर्ष की है । वह गेहुएँ रंग का साधारण उँचाई और शरीर का व्यक्ति है । सिर पर लम्बे बाल हैं तथा छोटी छोटी मूँछें । हजामत बढ़ गयी है । वह खादी की धोती तथा कुरता पहने है और घुटने तक उसके पैर जेल के कम्बल से ढके है । राधारमण कुर्सी पर बैठा है । उसकी उम्र लगभग चालीस वर्ष की है । वह साँवलें रंग का ठिगना और मोटा आदमी है । लम्बे बाल हैं तथा दाढ़ी मूँछ मुड़े हुए हैं । वह भी खादी का कुरता और धोती पहने है । सिर दोनों के नंगे हैं । राधारमण के पैरों में चप्पल है । बरामदे में एक क़ैदी जेल के कपड़े पहने बैठा है । क़ैदी बुड्ढा तथा बहुत ही दुबला-पतला है । इसके सिर पर पीले रंग की टोपी है । यह क़ैदी मक्खियों की ताक में इस तरह बैठा रहता है जैसे बिल्ली चूहे के ताक में और ज्योंही इसे कोई मक्खी दिखती है कि यह लपक कर अपने हाथ के कपडे के झाड़न से उसे गिराने का प्रयत्न करता है । जहाँ कोई मक्खी गिरी कि उसने प्रसन्नता से चिल्ला कर उस मक्खी का नम्बर बोला । एक वार्डर अपनी वरदी लगाये बरामदे में इधर-उधर घूम रहा है ।]

परमेश्वर दयाल—(लम्बी साँस लेकर) **फ़ोर्स-फ़ीडिंग वाले भी अभी तक नहीं आये ।**

राधारमण—(बाहर की ओर देख) ठीक दोपहर को आते हैं, आते ही होंगे।

परमेश्वर दयाल—(करवट ले राधारमण की ओर देखते हुए) ओह!

राधारमण—मैंने पहले ही कहा था भूख-हड़ताल इतना सहज चीज़ नहीं है।

परमेश्वर दयाल—(फिर करवट ले राधारमण की तरफ़ मुँह करते हुए, बिगड़ कर) जी हाँ, आपने कहा था और मैंने सुना था। सहज चीज़ नहीं है तभी तो उसे करना महत्व की बात है। सहज काम सभी कर लेते हैं, कठिन का करना ही विशेषता रखता है।

राधारमण—लेकिन सब उसे नहीं कर सकते, परमेश्वर दयाल।

परमेश्वर दयाल—(राधारमण की ओर पीठ करते हुए) विशिष्ट लोग कर सकते हैं न, यतीन्द्रनाथ दास ने की थी। मैं कर रहा हूँ।

राधारमण—तुम कर रहे हो फ़ोर्स फ़ीडिंग वालों की याद करके।

परमेश्वर दयाल—(एकदम बैठते हुए) राधारमण! राधारमण! तुम मित्र हो, अभिन्न मित्र। तुम्हारे सामने कमज़ोरी भी ज़ाहिर हो जाती है। कौन कमज़ोर नहीं होता, और तुम ताना देते हो।

बरामदे वाला क़ैदी—(ज़ोर से मक्खी गिराते हुए) दस। दस।

राधारमण—राम राम मैं तुम्हें ताना दूँगा, भाई। मैं तो यह इसलिए कह रहा हूँ कि तुम इस बला से अपना पीछा छुड़ा लो।

परमेश्वर दयाल—(उत्तेजना से) मैंने तुमसे कह दिया, एक नहीं हज़ार बार कह दिया मैं यतीन्द्रनाथ दास के सदृश मरने वाला हूँ, मैं मैक्स वाइनी के समान प्राण त्याग करूँगा; मेरा एक-एक अंग मरेगा, एक-एक इन्द्रिय निर्जीव होगी। हाथ मरेंगे, पैर मरेंगे। अन्धा होऊँगा, बहरा भी। ज़बान बन्द हो जायगी। और फिर पूरा का पूरा मर जाऊँगा। मरूँगा, ज़रूर मरूँगा, ज़रूर, ज़रूर मरूँगा।

राधारमण—अच्छा, तुम लेट जाओ। भूख-हड़ताल में श्रम से बुरी कोई चीज़ नहीं होती। इस तरह उठ-उठ कर, उत्तेजित होकर, श्रम करना तो अक्षम्य है।

[परमेश्वर दयाल चुपचाप लेट जाता और राधारमण की तरफ़ पीठ करके लम्बी साँस लेता है। कुछ देर निस्तब्धता]

राधारमण—परमेश्वर, एक बात पूछूँ !

परमेश्वर दयाल—(राधारमण की ओर घूमकर) कौनसी ?

राधारमण—यतीन्द्रनाथ दास ने कुछ सिद्धान्तों पर अनशन किया था। उसने जेल अधिकारियों के सामने कुछ माँगे, बड़ी-बड़ी माँगे, रखी थीं। मैक्स वाइनी का भी यही हाल था। तुम यह भूख-हड़ताल किस सिद्धान्त पर कर रहे हो ? तुम कौन सी माँगें पूरी कराना चाहते हो ? गान्धी जी इस तरह के अनशन के ख़िलाफ़ हैं और तुम हो सत्याग्रही कैदी।

परमेश्वर दयाल—(फिर उठ कर बैठते हुए) तो गान्धी जी मुझे कहलाते क्यों नहीं कि मैं इस अनशन को छोड़ दूँ।

राधारमण—वह·· वह प्रयत्न भी मैं कर रहा हूँ। कल ही वार्डर के हाथ गुप चुप एक चिट्ठी मैंने यहाँ की कांग्रेस कमेटी के सभापति को भेजी है। और मुझे विश्वास है कि गान्धी जी के पास तार चला गया होगा तथा उनका तार आता ही होगा।

बरामदे वाला क़ैदी—(ज़ोर से मक्खी गिराते हुए) ग्यारा। ग्यारा।

परमेश्वर दयाल—(फिर लेटते हुए) आपने तो अनशन का संवाद पत्रों में भी भेजा था ; वह छप गया ; और गाँधी जी का तार भी आ जायगा !

राधारमण—भाई, संवाद भेजा तो अवश्य था, और मुझे विश्वास है कि वार्डर ने ज़रूर पहुँचा दिया, पर छपना न छपना मेरे हाथ में नहीं।

परमेश्वर दयाल—(लम्बी साँस लेकर राधारमण की ओर पीठ करते हुए) और गाँधी जी का तार आना आपके हाथ में है ?

राधारमण—हाँ, यह भी मेरे हाथ में नहीं है। लेकिन...लेकिन...

परमेश्वर दयाल—(फिर उठकर बैठते हुए) अगर-मगर, लेकिन कुछ नहीं, सुना, अगर-मगर, लेकिन कुछ नहीं। मैंने तो तुमसे कह दिया, एक नहीं हज़ार बार कह दिया। मैं यतीन्द्रनाथदास के सदृश मरने वाला हूँ, मैं मैक्स वाइनी के समान प्राण त्याग करूँगा मेरा एक-एक अंग मरेगा, एक-एक इन्द्रिय निर्जीव होगी। हाथ मरेंगे, पैर मरेंगे। अंधा होऊँगा, बहरा भी। ज़बान बन्द हो जायगी। और फिर...पूरा हाँ, पूरा का पूरा मर जाऊँगा। मरूँगा, ज़रूर मरूँगा, ज़रूर-ज़रूर मरूँगा।

राधारमण—अच्छा, अच्छा, लेट तो जाओ श्रम नहीं।

[परमेश्वर दयाल चुपचाप लेट जाता है और राधारमण की ओर पीठ करके एक लम्बी साँस लेता है। कुछ देर निस्तब्धता।]

बरामदे वाला क़ैदी—(ज़ोर से एक मक्खी गिरा कर) बारा। बारा।

परमेश्वर दयाल—बारह बजे।

राधारमण—(बाहर देख कर) नहीं, नहीं, वह पीली टोपी मक्खी मार रहा है बारहवीं मक्खी मारी है।

[फिर कुछ देर निस्तब्धता।]

राधारमण—परमेश्वर, एक बात कहूँ ?

परमेश्वर दयाल—(राधारमण की ओर घूम कर) कौन सी ?

राधारमण—देखो, इस तरह जान देना कोई बुद्धिमानी की बात होगी ? तुम्हारे बीबी-बच्चे, माँ-बाप नहीं है, नहीं तो अभी तक सारा

जेल उन्होंने सिर पर उठा कर रख लिया होता। पर तुम्हारा मित्र है। तुम्हारा देश है। इस प्रकार प्राण देने से लाभ? मेरी एक प्रार्थना मानोगे?

परमेश्वर दयाल—(गद्गद् स्वर से) राधारमण, तुम...तुम मेरे सर्वस्व हो; और कौन...कौन मेरा है? तुम्हारा कहना कभी टाल सकता हूँ!

राधारमण—यों तो तुम अनशन तोड़ोगे नहीं। मैं चुपचाप अपने खाने का थोड़ा सा हिस्सा लाकर तुम्हें बिना किसी के जाने खिला दूँ तो इसमें भी कोई हानि है?

परमेश्वर दयाल—हरि, हरि, हरि! शिव, शिव!

राधारमण—कहता हूँ मैं किसी को कानों कान ख़बर न पड़ेगी।

[परमेश्वर दयाल फिर उसकी तरफ़ पीठ कर लेता है। कुछ देर फिर निस्तब्धता।]

बरामदे वाला क़ैदी—(ज़ोर से एक मक्खी गिराकर) तेरा। तेरा।

परमेश्वर दयाल—अरे यह क्या ...तेरा तेरा, मेरा मेरा, हो रहा है।

राधारमण—कुछ नहीं जी, वही पीली टोपी मक्खी मार रहा है। जितनी ज़्यादा मक्खियाँ मारेगा उतनी ही उसे माफ़ी जो मिलेगी।

[कुछ देर फिर निस्तब्धता।]

राधारमण—तो बोलो, क्या कहते हो?

परमेश्वर दयाल—(राधारमण की ओर मुख कर) देखो, राधारमण, तुमसे अधिक मेरे लिए इस दुनियाँ में कोई नहीं, तुम्हारी आज्ञा टालना मेरे लिए कठिन...कठिन ही नहीं असंभव है; नहीं, महापाप, घोर तम पाप है, परन्तु...परन्तु यदि किसी को मालूम...मालूम हो गया तो... और भी एक बात है।

राधारमण—कैसी?

परमेश्वर दयाल—तुम नहीं समझते कि लोकल गवर्मेन्ट मुझे छोड़···।

[बरामदे से मेजर क्राफ़्टन, डाक्टर खान, जेलर और चार वार्डर आते हैं। क्राफ़्टन और खान अँग्रेज़ी पोशाक पहने हैं। डाक्टर खान के हाथ में एनिमापाट में दूध है। एनिमापाट में एक रबड़ की नली लगी है। जेलर और वार्डर वरदियाँ पहने हैं। बरामदे वाला वार्डर फ़ौजी ढंग से खड़े हो फ़ौजी सलाम करता है। बरामदे वाला क़ैदी खड़े होकर कहता है—'सरकार एक' ये सब लोग गुनहखाने में प्रवेश करते हैं। राधारमण खड़ा हो जाता है।]

क्राफ़्टन—वैल मिस्टर परमेश्वर दयाल ! आपका कैसा तबियट है।

परमेश्वर दयाल—तबीयत ! तबीयत बहुत अच्छी है, सुपरेन्टेन्डन साहब।

क्राफ़्टन—और हंगरस्ट्राइक का मामला में आपका डिसीशन वोई है ?

परमेश्वर दयाल—बिलकुल वही मेजर ! मैं यतीन्द्रनाथदास के सदृश मरने वाला हूँ। मैं मैक्स वाइनी के समान प्राण त्याग करूँगा। मेरा एक-एक अंग मरेगा। एक-एक इन्द्रिय निर्जीव होगी। हाथ मरेंगे, पैर मरेंगे। अन्धा होऊँगा, बहरा भी। ज़बान बन्द हो जायगी। और फिर पूरा...हाँ, पूरा का पूरा मर जाऊँगा, मरूँगा, ज़रूर मरूँगा, ज़रूर-ज़रूर मरूँगा।

क्राफ़्टन—बोट अफसोस हमको बोट अफसोस। आइजी का लेटर आया। उनको और लोकल गवर्मेन्ट को भी बोट अफसोस। आप मरेगा तो हमको और भी अफसोस होगा, लेकिन हम लोग क्या करे हमको अपना ड्यूटी टो आपको जीटा रखने के लिए करनाई होगा। फोर्सफीडिंग का सिवा हम क्या कर सकटा।

परमेश्वर दयाल—हाँ, हाँ आप अपनी ड्यूटी कीजिए मैं अपनी करूँगा।

क्राफ़्टन—(डाक्टर खान की ओर देखकर) डाक्टर खान······।

[डाक्टर खान आगे बढ़ता है। चारों वार्डर आगे बढ़ दो परमेश्वर दयाल के हाथ पकड़ते हैं और दो पैर। डाक्टर रबर के ट्यूब का सिरा परमेश्वर दयाल के मुँह की ओर ले जाता है।]

परमेश्वर दयाल—(वार्डरों से) अरे भाई, धीरे-धीरे पकड़ो। आपका हाथों और पैरों पर हाथ लगा लेना ही सिद्धान्त की दृष्टि से फ़ोर्स काम में लाना हो जाता है।

[वार्डर परमेश्वरदयाल के हाथों और पैरों पर सिर्फ़ हाथ रख लेते हैं। डाक्टर उसके मुँह में रबर का ट्यूब डालता है। परमेश्वर दयाल बिना हिले डुले पड़ा रहता है। थोड़ी देर में पनिमा पाट खाली हो जाता है। ट्यूब हटा लिया जाता है। वार्डर उसे छोड़ देते हैं और बाहर जाते हैं।]

काफ़्टन—मैनी मैनी थैंक्स, मिस्टर परमेश्वर दयाल! हमने बोट··· बोट हगर स्ट्राइकर्स डेखा, लेकिन इटना······इटना सिविल नेईं।

परमेश्वर दयाल—सिविल! हर हालत में सिविल रहना हमारा कर्तव्य है, धर्म है, मेजर; जेल में भी हम लोग सिविल डिसओबीडियन्स करके ही तो आये हैं।

काफ़्टन—अाच्छा, देखिए। आपका इन्टव्यू आया है।

परमेश्वर दयाल—इन्टव्यू! कौन मिलने आया है?

काफ़्टन—इस सिटी का कांग्रेस कमिटी का प्रेसीडन्ट।

परमेश्वर दयाल—ओ! नरोत्तम प्रसाद।

[सुपरेन्टेन्डेन्ट-जेलर की ओर देखता है।]

जेलर—जी हाँ, मिस्टर नरोत्तमप्रसाद!

काफ़्टन—आप आफ़िस चल सकटा?

परमेश्वर दयाल—मैं? मेरी तो ऐसी हालत नहीं है।

काफ़्टन—डज़न्ट मैटर···मैटर्स लिटिल। (जेलर से) उसको इसी सैल में इन्टव्यू डो।

जेलर—वेरीवेल, सर।

काप्टन—(राधारमण से) वैल मिस्टर राटारमन। ऐनी थिंग एल्स ?

राधारमण—और तो कुछ नहीं है।

[अभिवादनों के बाद काप्टन, जेलर और डाक्टर खान का प्रस्थान। राधारमण कुर्सी पर बैठता है।]

राधारमण—(प्रसन्नता से) गान्धी जी का तार आ गया।

परमेश्वर दयाल—(प्रसन्नता दबाने का प्रयत्न करते हुए) कैसे कहा जा सकता है ?

राधारमण—कैसे कहा जा सकता है ! नरोत्तम प्रसाद जो आया है।

परमेश्वर दयाल—पर वह गान्धी जी का तार लाया है, यह कैसे कह सकते हो !

राधारमण—उसके आने का और प्रयोजन ही क्या हो सकता है ?

बरामदे वाला कैदी—(जोर से मक्खी गिराकर) चउदा। चउदा।

[कुछ देर निस्तब्धता।]

राधारमण—क्यों, परमेश्वर, यदि गान्धी जी ने तार भेजा होगा तब तो यह भूख हड़ताल तोड़ दोगे न !

परमेश्वर दयाल—(फिर प्रसन्नता को दबाने का प्रयत्न करते हुए) क्या कहूँ......परन्तु......परन्तु......(चुप हो जाता है।)

राधारमण—फिर भी किन्तु, परन्तु का प्रश्न रह जाता है ?

परमेश्वर दयाल—मैं ....मैं तो यतीन्द्रनाथ दास के सदृश .....।

राधारमण—(बीच ही में) अरे छोड़ो ये वाहियात बातें। (कुछ रुककर) यह बताओ कि पहले पहले क्या खाओगे !

बरामदे वाला कैदी—(जोर से मक्खी गिराकर) पन्द्रा। पन्द्रा।

परमेश्वर दयाल—इस क़ैदी के मारे तो नाकों दम हो गया।

राधारमण—पर, भाई, मक्खियाँ कितनी बढ़ी हैं? और कमजोर होने के कारण उस क़ैदी को और काम कौन सा दिया जा सकता है।

परमेश्वर दयाल—ये पीली, काली, लाल, दुरंगी टोपियाँ जेल में खास महत्व रखती है, क्यों?

राधारमण—हाँ, इनसे क़ैदियों की स्थितियों का पता लग जाता है। (कुछ रुककर) अच्छा, बताओ तो पहले पहल क्या खाओगे?

परमेश्वर दयाल—(विचारते हुए) अनशन के बाद खाया तो जाता नहीं, पिया जाता है।

राधारमण—अच्छा, क्या पियोगे?

परमेश्वर दयाल—(विचारते हुए) हर भूख-हड़ताली···भूख-हड़ताल तोड़ने के समय सन्तरे का रस ही पीता है न? गान्धी जी ने भी हरिजनों के सम्बन्ध में जो प्रसिद्ध अनशन किया था उसे सन्तरे का रस पीकर ही तोड़ा था। और······और······(चुप हो जाता है।)

राधारमण—और?

परमेश्वर दयाल—वह सन्तरे का रस पिया जाना चाहिए वन्देमातरम् के गीत के बीच। तथा ये सब समाचार अख़बारों में ·····।

[नरोत्तम प्रसाद जेलर के साथ आता है। नरोत्तमप्रसाद की अवस्था लगभग पचास वर्ष की है। वह गेहुएँ रंग का ऊँचा-पूरा, मोटा-ताज़ा व्यक्ति है। खादी का कुरता और धोती पहने है। सिर पर गाँधी टोपी है और पैरों में चप्पल। राधारमण खड़ा हो जाता है। परमेश्वर दयाल लेटे-लेटे और राधारमण खड़े हुए नरोत्तमप्रसाद का अभिवादन करता है। नरोत्तमप्रसाद कुर्सी पर बैठता है, जेलर टेबिल के एक कोने पर और राधारमण परमेश्वर दयाल के पलंग पर, एक तरफ़।]

नरोत्तम प्रसाद—कहिए, परमेश्वर दयाल जी अच्छे तो हैं, यह भूख हड़ताल क्यों ?

परमेश्वर दयाल—(अत्यन्त गम्भीर होकर) अनशन आत्म-शुद्धि के लिए किया जाना चाहिए, उसी के लिए किया जा रहा है और निष्काम, सर्वथा निष्काम, नरोत्तम प्रसाद जी।

नरोत्तम प्रसाद—ठीक है, लेकिन आप सत्यग्राही स्वयं-सेवक हैं और आप जानते हैं कि अनशन के सदृश क़दम बिना किसी ख़ास परिस्थिति के नहीं उठाया जा सकता।

परमेश्वर दयाल—गाँधी जी ने इस प्रकार की कोई आज्ञा भेजी है ?

नरोत्तम प्रसाद—जी नहीं, पर इस प्रान्त में ऐसे मामले में मुझे गान्धी जी ने सारे अधिकार दे रखे हैं।

परमेश्वर दयाल—आपने गान्धी जी को लिखा कि मैं भूख हड़ताल कर रहा हूँ।

नरोत्तम प्रसाद—इसकी कोई जरूरत ही नहीं है।

परमेश्वर दयाल—जरूरत ही नहीं है ! (कुछ रुककर) मैं यतीन्द्रनाथ दास के सदृश मरने वाला हूँ। मैं मैक्स वाइनी के समान प्राण त्याग करूँगा। मेरा एक-एक अंग मरेगा। एक-एक इन्द्रिय निर्जीव होगी। हाथ मरेंगे, पैर मरेंगे। अन्धा होऊँगा, बहरा भी। जबान बन्द हो जायगी। और फिर पूरा, हाँ, पूरा का पूरा मर जाऊँगा। मरूँगा, ज़रूर मरूँगा, ज़रूर ज़रूर मरूँगा।

नरोत्तम प्रसाद—ऐसा ! (विचारते हुए) अच्छी बात है, आप जैसा उचित समझें कीजिए। मैं आप से एक बात कहे देता हूँ।

परमेश्वर दयाल—कहिए।

नरोत्तम प्रसाद—सत्याग्रही स्वयंसेवक रहते हुए आप यह न कर सकेंगे। देखिए, परमेश्वर दयाल जी कांग्रेस के कुछ निश्चित सिद्धान्त हैं।

उसके संघठन में शिरत है। बिना कारण इस प्रकार की भूख हड़ताल नहीं की जा सकती। आप पर मुझे डिसप्लेनेरी एक्शन लेना होगा।

परमेश्वर दयाल—(एक दम उठकर बैठते हुए) डिसपलेनरी एक्शन !

बरामदे वाला कैदी—(जोर से मक्खी गिरा कर) सोला सोला।

नरोत्तम प्रसाद—जी हाँ, सोलहों आने डिसिप्लेनरी एक्शन।

राधारमण—पर इसकी······इसकी ज़रूरत ही नहीं है, नरोत्तम प्रसाद जी, परमेश्वर दयाल जी सोलह आना समझदार आदमी हैं। यहाँ आप गान्धी जी की जगह हैं। (परमेश्वर दयाल से) भाई, गान्धी जी ने अनशन तोड़ने की आज्ञा दी होती तो तुम क्या करते ?

परमेश्वर दयाल—क्या······क्या कहूँ ?

राधारमण—यह कहो कि पालन करते ; और उनकी आज्ञा पालन करते तो नरोत्तम प्रसाद जी की न करोगे ?

[परमेश्वर दयाल चुपचाप लेट जाता है। सब लोग उसकी ओर देखते हैं। कुछ निस्तब्धता।]

राधारमण—अच्छा, देखिए, नरोत्तम प्रसाद जी, आप······आप कृपा कर अख़बार में यह भिजवा दें कि आपकी आज्ञा से परमेश्वर दयाल जी ने भूख हड़ताल तोड़ दी है और······और······(चुप हो जाता है।)

परमेश्वर दयाल—वह तोड़ी गयी है सन्तरे का रस पीकर, वन्देमातरम् के गान के बीच······बीच में······।

यवनिका

समाप्त

—:*:—

*

विटैमिन

पात्र, स्थान

पात्र

बच्छूराज—एक धनिक युवक

कविता—बच्छूराज की पत्नी

गोपाल नंदन—एक डाक्टर

अच्छे लाल—बच्छूराज के नौकर

स्थान

एक नगर

उपक्रम

स्थान—बच्छराज का बैठकखाना

समय—सन्ध्या

[बैठकखाना आधुनिक ड्राइंग रूम के सदृश सुन्दरता से सजा है। दीवालें और छत रंगी हुई हैं। दीवालों के अनेक दरवाजों और खिड़कियों से बाहर का उद्यान और उस पर पड़ती हुई डूबते हुए सूर्य की सुनहरी किरणें दिखायी देती हैं। दरवाजों और खिड़कियों पर महराबदार रेशमी परदे पड़े हैं। दीवालों पर कई तैल-चित्र लगे हैं। छत से बिजली के झाड़ और पंखे झूल रहे हैं। जमीन पर कालीन है, जिस पर बेशक़ीमती फ़र्नीचर है। सोफ़ तथा कुर्सियाँ रेशमी गद्दोदार हैं; और टेबिलें रेशमी मेजपोशों से ढकी हुई, जिन पर फूलों से भरे गुलदस्ते, और कई तस्वीरें सजी हैं। कुछ बुकशेल्फ़ भी हैं, जिनमें किताबें रखी हैं। एक आराम कुर्सी पर बच्छराज बैठा हुआ स्वास्थ्य संबंधी एक पुस्तक पढ़ रहा है। उसकी अवस्था बाईस-तेईस वर्ष की है। वह गेहुएँ रंग का, ऊँचा-पूरा और कुछ मोटा-सा मनुष्य है। लंबे बाल और छोटी छोटी मूछें हैं। उसके वस्त्र अँग्रेजी ढंग के हैं। गोपालनंदन का प्रवेश। वह साँवले रंग का कुछ ठिगना और दुबला पतला व्यक्ति है। उसकी उम्र क़रीब चालीस वर्ष की है। वह दाढ़ी मूछ मुड़ाये है, और उसके कपड़े भी अँग्रेजी फ़ैशन के हैं। गोपालनंदन के आने की आहट पाकर बच्छराज उसकी ओर देखता है और 'ओ, डाक्टर' कहते हुए, खड़े हो, पुस्तक टेबिल पर रख, उसकी तरफ़ बढ़, उससे हाथ मिलाता है। दोनों सोफे पर बैठते हैं।]

गोपालनंदन—(जो किताब बच्छराज पढ़ रहा था उसे उठा कर इधर उधर से देखते हुए) **स्वास्थ्य-शास्त्र की दृष्टि से सचमुच यह अच्छी पुस्तक है।**

बच्छूराज—क्या करूँ, पुस्तकों से ही स्वास्थ्य विषयक कुछ नियम निर्धारित कर रहा हूँ, क्योंकि आप तो वह नोट-बुक लायेंगे नहीं।

गोपालनंदन—(पतलून की जेब से कुछ निकालते हुए) इसीलिए एक हफ़्ते से नहीं आया था। मैं जानता था इस बार बिना नोट बुक के आया तो आप क्षमा करने वाले नहीं। (नोट बुक निकालता है।)

बच्छूराज—(जल्दी से नोट बुक लेने को हाथ बढ़ा, प्रसन्नता से) देखूँ देखूँ, डाक्टर।

गोपाल नंदन—(नोट बुक न देकर हाथ पीछे हटाते हुए) भाई, समझना पड़ेगा, मुझे हर बात समझानी होगी।

बच्छूराज—अच्छी बात है, समझा कर दीजिए। ग़नीमत यही है कि आख़िर आप इसे ले आये।

गोपालनंदन—मैंने कहा न, इसीलिए एक हफ़्ते से आया नहीं। फिर अब तो आने के दो सबब और थे।

बच्छूराज—कौन से ?

गोपाल नदन—पहला आपका मोटा होते जाना और दूसरे (मुसकराते हुए) अच्छेलाल ने मुझे कहा था कि अगले महीने बहू जी आ रही हैं।

बच्छूराज—(मुसकरा कर) ऐसा।

गोपालनंदन—स्वास्थ्य-संबधी नियमों की जीवन के इसी काल में सबसे ज़्यादा ज़रूरत होती है।

बच्छूराज--अच्छा, अच्छा, (नोट बुक की तरफ देखकर) समझाओ इसमें क्या लूघढ़-पत्थर लिखा है ?

गोपालनंदन--(नोट बुक खोलते हुए) अभी लो। (नोट बुक के पन्ने उलटते तथा गला साफ करते हुए) देखिए, मैंने सुबह उठने से लेकर रात को सोने तक की सारी दिनचर्या लिख दी है। अलस्सुबह उठना।

शौच से निवृत हो व्यायाम करना, दंड बैठक मुगदर नहीं, कुछ हलके हलके व्यायाम अनेक पद्धतियों में से छाँट कर मैंने निकाले हैं और इन्हें आपको सिखा दूँगा। फिर व्यायाम से निपट चहलक़दमी करना; चहल-क़दमी में एक एक क़दम कितने फुट और इंच का होना चाहिए और उसकी लम्बाई धीरे-धीरे क्यूँ कर बढ़नी चाहिए। फिर एक कड़ी टेबिल पर सीधे, उलटे, आड़े टेढ़े लेटकर उल्टी मालिश कराना···एक दिन आकर खुद करवा दूँगा, तब आप समझेंगे; सीधी मालिश नहीं, उल्टी मालिश; और उसका समय भी धीरे-धीरे बढ़ाना। मालिश के बाद थरमामीटर से पानी का टेम्प्रेचर नाप कर स्नान करना। फिर शरीर पर पफ़ से पाउडर लगाना। उसके बाद नीरा पीना। फिर मध्याह्न को भोजन। भोजन से निवृत हो वामकुक्षि फिर अपराह्न का नाश्ता! उसके बाद शाम की हवा खोरी। हवा खोरी में मोटर की ठीक स्पीड। फिर शाम का भोजन। और कब सोना तथा बहू जी के आने के बाद उनके··· उनके (बच्छराज की ओर देखते हुए मुसकरा कर) समझ लिया न?

बच्छराज—(मुसकराते हुए) जी हाँ,······समझ, बिल्कुल समझ लिया।

गोपाल नंदन—(जल्दी-जल्दी नोट-बुक के पन्ने उलटते हुए) इस तरह इसमें सुबह बिस्तर छोड़ रात को बिस्तर पर जाने तक और रात को बिस्तर पर जाने के बाद की भी (मुसकराते हुए) सारी दिनचर्या लिखी हुई है। इसके अनुसार आप चलें तो "जीवेम शरद:शतम्" की हमारी प्राचीन युक्ति के अनुसार आप नीरोग सौ वर्ष जिएंगे। पुराने लोगों ने सौ वर्ष तक जीने की कल्पना की थी, लेकिन उसके लिए जीवन की जिस प्रणाली की ज़रूरत है, वह आधुनिक वैज्ञानिक ही निकाल सके हैं।

बच्छराज—इसमें क्या सन्देह है, आख़िर दुनियाँ में तरक्क़ी जो हो रही है।

गोपाल नंदन—बेशक और इस जीवन प्रणाली में जो सबसे मुख्य बात है उसी को आपको अच्छी तरह समझ लेना चाहिए।

बच्चूराज—कौन सी ?

गोपाल नंदन—यही बताता हूँ। (गला साफ कर) देखिए: मनुष्य को स्वस्थ और दीर्घ जीवी बनाने के लिए सबसे ज़रूरी चीज़ है वैज्ञानिक भोजन; भोजन में अस्वाभाविकता और कृत्रिमता ले आने के कारण ही मनुष्य ने अगणित बीमारियाँ पैदा की हैं, अपनी उम्र घटा ली है, और अपना शारीरिक तथा आत्मिक बल खोया है।

बच्चूराज—(गोपाल नंदन के आने के पहले जो पुस्तक वह पढ़ रहा था, उसे उठाते हुए) आप बिलकुल ठीक कहते हैं, डाक्टर, इस पुस्तक में भी यही बात लिखी है।

गोपाल नंदन—वह तो लिखी ही होगी। स्वास्थ्य संबन्धी आप किसी किताब को भी उठा लीजिए, सब में आपको यही बात मिलेगी।

बच्चूराज—ऐसा ?

गोपाल नंदन—बेशक। जो प्राणी स्वाभाविक तथा अकृत्रिम भोजन करते हैं उनका और मनुष्य का मिलान कीजिए आपको फ़ौरन इसका सच्चा रहस्य मालूम हो जायगा। (फिर गला साफ कर) मांसाहारी पशु-पक्षी, शाकाहारी पशु-पक्षी: मनुष्य से बहुत मिलता-जुलता बन्दर सब कच्ची चीज़ें खाते हैं। हर तरह की चीज़ों को मिलामिलू कर आग पर उन्हें भिन्न-भिन्न प्रकार से उबालना, सेंकना और तलना भोजन में मूल की ख़राबी है।

बच्चूराज—तो पशु-पक्षी इसीलिए स्वस्थ रहते हैं कि वे कच्ची चीज़ें खाते हैं और मनुष्य इसीलिए बीमार रहता है कि उसने अग्निदेव का सहारा लिया है।

गोपाल नंदन—निःसन्देह अग्नि देव नहीं, दैत्य है, विकराल से विकराल दैत्य। उसका उपयोग करना चाहिए बीमारियों के कीटाणुओं के संहार के लिए। अस्पतालों में औज़ारों, बैन्डेज इत्यादि को डिस-

इन्फैक्ट करने के लिए, घरों में बर्तनों, कपड़ों इत्यादि को साफ़ रखने के लिए। चौके में इस दैत्य का काम नहीं।

बत्सराज—ठीक।

गोपाल नंदन—बात यह है कि वैज्ञानिकों ने बहुत शोध के बाद 'विटेमिन थियोरी' निकाली है।

बत्सराज—हाँ, हाँ, आज कल तो यह बहुत प्रसिद्ध हो गयी है। इसी को आचार्य हैं न मैककैरिसन?

गोपाल नंदन—जी हाँ. अभी 'ए' से लेकर 'आइ, जे' तक विटेमिन पहुँचे हैं। धीरे धीरे 'ज़ैड' तक पहुँच जायेंगे, इतना नहीं, इनके लिए वर्णमाला में शायद नये अक्षरों का आविष्कार करना पड़ेगा।

बत्सराज—ऐसा, तो अभी यह थियोरी भी अधूरी है?

गोपाल नंदन—विज्ञान में अधूरी तो हर एक चीज़ ही रहती है, क्योंकि खोज का काम जारी जो रहता है, पर अब तक इस विषय में जितनी शोध हुई है उसी के अनुसार चला जाय तो मनुष्य नीरोग रहकर सौ वर्ष तक जी सकता है।

बत्सराज—और आगे खोज होने पर धीरे-धीरे उम्र और भी बढ़ सकती है?

गोपाल नंदन—क्यों नहीं, बर्नार्डशा ने अपने नाटक 'बैकटू मैथ्यूसुला' में हज़ारों वर्षों तक मनुष्य के जीने की कल्पना की है। सम्भव है कोई ऐसा विटेमिन निकल आए जिससे मनुष्य अमर हो जाय।

बत्सराज—तब तो, डाक्टर, अब तक जो इतने आदमी मर गये, इनके लिए अफ़सोस करना पड़ेगा?

गोपाल नंदन—हाँ, पर क्या किया जा सकता है, मनुष्य की आँखें तो चेहरे के आगे के रुख में ही हैं पीछे नहीं। आदमी तो आगे की ओर ही देखता है, पीछे की तरफ़ नहीं। (कुछ रुककर) अच्छा सुनिए,

नयी शोधों के अनुसार आदर्श भोजन कैसा होना चाहिए, इसे थोड़े ब्योरे में सुन लीजिए (नोट-बुक के एक पृष्ठ पर दृष्टि गडा फिर गला साफ कर) देखिए, सबसे पहली बात है चौके से आग का बहिष्कार।

बच्छूराज—(अँगुली पर अँगूठे से गिनते हुए) पहली बात है चौके से आग का बहिष्कार।

गोपाल नंदन—(नोट-बुक के उसी पेज को देखते हुए) दूसरी बात है अल्पाहार।

बच्छूराज—(अँगुली पर अँगूठे से गिनते हुए) दूसरी बात है अल्पाहार।

गोपाल नंदन—(बच्छूराज की ओर देखते हुए) मनुष्य ज़रूरत से कहीं ज़्यादा खाता है।

बच्छूराज—ऐसा ?

गोपाल नंदन—आह ! बहुत……बहुत ज़्यादा। (फिर नोट-बुक को देखते हुए) तीसरी बात है भोजन का ठीक मेल अर्थात् कम्पैटेबिलटी।

बच्छूराज—(अँगुली पर अँगूठे से गिनते हुए) तीसरी बात है भोजन का ठीक मेल, अर्थात् कम्पैटेबिलटी।……याने ?

गोपाल नंदन—(बच्छूराज की ओर देखते हुए) याने यह कि कुछ चीजें एक दूसरे के साथ खायी जा सकती हैं और कुछ नहीं। मसलन हमारे यहां दाल-रोटी, दाल-भात बड़े प्रसिद्ध संयुक्त शब्द हैं। इन दोनों संयुक्त शब्दों का ऐसा विच्छेद करना ज़रूरी है कि ये कभी भी एक दूसरे के नज़दीक न आने पावें।

बच्छूराज—तो रोटी और चावल दाल के साथ नहीं खाये जा सकते ?

गोपाल नंदन—कभी नहीं, (नोट-बुक के पीछे के कुछ पृष्ठ दिखाते हुए) मैंने नोट-बुक में कुछ परिशिष्ट जोड़ दिये हैं, जिनमें से एक में मेल और बेमेल के पदार्थों की सूची दे दी है।

बच्छूराज—तब तो, डाक्टर, आपने इस नोट बुक के तैयार करने में सचमुच बड़ी मेहनत की है।

गोपाल नंदन—बेशक, तभी तो इसके तैयार करने में इतनी देर लग गयी। इसीलिए मुझे सैकड़ों पुस्तकों को देखना पड़ा है। (कुछ रुककर फिर नोट-बुक देखते हुए) कम्पैटेबिलटी के बाद चौथी बात है प्रपोरशन की स्टैबिलिटी।

बच्छूराज—(अँगुली पर अँगूठे से गिनते हुए) कम्पैटेबिलटी के बाद चौथी बात है प्रपोरशन की स्टैबलिटी।……याने?

गोपाल नंदन—(बच्छूराज की तरफ देखकर) याने यह कि कौन चीज कितनी मिकदार में खानी चाहिए। (पीछे के कुछ पृष्ठ दिखाते हुए) इसके लिए भी एक परिशिष्ट है।

बच्छूराज—अच्छा।

गोपाल नंदन—पाँचवीं बात है पीने शब्द का लोप।

बच्छूराज—इसका मतलब समझ में नहीं आया।

गोपाल नंदन—इसका मतलब यह है कि बंगाली लोग जिस तरह 'दूध खाबो', 'जल खाबो' कहते हैं उसका व्योहार में प्रयोग करना चाहिए अर्थात् कोई चीज बिना चाबे, चाहे वह पीने लायक ही क्यों न हो, चाबकर गले के नीचे उतारना चाहिए; पानी तक। बल्कि पीने और खाने दोनों शब्दों का बहिष्कार कर चाबने शब्द के अनुसार क्रिया करनी चाहिए। हर ग्रास या घूँट को एक सौ आठ बार चाबना चाहिए। दूध चाबना, दही चाबना, पानी चाबना, सबको चाबना चाहिए, सबको।

बच्छूराज—ऐसा?

गोपाल नंदन—बिलकुल। (कुछ रुककर) अच्छा, अब देखिए, मैंने कौन कौन चीजें नहीं खाना चाहिए, इसकी एक सूची बनायी है। इनमें से प्रधान चीजें सुन लीजिए।

बच्छूराज—जरूर।

गोपाल नंदन—मैंने आपसे कहा हो, आग पर उबली, सिकी और तली चीज़ें न खाकर कच्ची चीज खाना चाहिए, पर मनुष्य आग का इतना आदी हो गया है कि वह एकदम से इस दैत्य से अपना पीछा नहीं छुड़ा सकता। कच्ची चीज़ों के साथ ही अभी वह आग पर बनायी हुई चीज़ें भी खायेगा; पर इनमें कुछ ऐसी हैं जो उसे कभी न खाना चाहिए। (नोट-बुक देख) पहली चीज़ है चावल।

बच्छूराज—चावल नहीं खाना चाहिए ?

गोपाल नंदन—नहीं, उसमें विटेमिन का अंश नहीं के बराबर है। फिर उससे 'बैरी बैरी' हो जाती है।

बच्छूराज—'बैरी बैरी' क्या ?

गोपाल नंदन—यह बंगाल की एक बीमारी है; और इसीलिए वहीं शुरू हुई कि वहाँ के लोग मुख्यतः चावल खाते हैं।

बच्छूराज—इस बीमारी में क्या होता है, डाक्टर ?

गोपाल नंदन—विचित्र बीमारी है। पैरों से लेकर सारे शरीर में झुन-झुनी होती है। और इलाज भी इसका अजीब है। हज़ारों घड़े ठंढा पानी सिर से उड़ेलना पड़ता है। या तो मरीज़ ठंडा हो जाता है या बीमारी।

बच्छूराज—अच्छा।

गोपाल नंदन—(नोट-बुक देख) शक्कर नहीं खाना चाहिए।

बच्छूराज—शक्कर भी नहीं ?

गोपाल नंदन—नहीं। शक्कर को आप सफ़ेद ज़हर समझिए। (नोट-बुक देख) मिठाई और नमकीन दोनों नहीं खाने चाहिये।

बच्छूराज—मिठाई और नकीन भी नहीं ?

गोपाल नंदन—ना; ये सब मुर्दा खाने, डेड फूड्स हैं।

बच्छराज—तब फिर खाना क्या चाहिए ?

गोपाल नंदन—खाना क्या चाहिए। (फिर पीछे के पृष्ठों को दिखाकर) नहीं खाने लायक़ और खाने योग्य चीजों के एक परिशिष्ट भी इस नोट-बुक में जुड़े हैं। पर आदर्श भोजन और उसकी मिक़दार का एक खास चार्ट मैंने अलग लिख दिया है वह आपको पढ़ कर सुना देता हूँ।

बच्छराज—हाँ, यह ठीक होगा।

गोपाल नंदन—(नोट-बुक के एक पृष्ठ को पढ़ते हुए)

१—कच्चा गेहूँ दो तोले।

२—अंकुरित चना 'स्प्राउटेड ग्रेम' जो ३६ घंटे पानी में रखकर तैयार किया जाता है, एक तोला छै माशे।

३—सोयाबीन एक तोला।

४—चोकर नौ माशे।

५—गुड़, और राब हो तो और भी अच्छा, छै माशे।

६—मक्खन चार माशे तीन रत्ती, मक्खन इस देश में अच्छा नहीं बनता, पर 'पालसन' का बटर चल सकेगा।

७—शहद तीन माशे छै रत्ती। शहद यहाँ का प्रायः नकली आती है, इसलिए फ्रेंच या अमेरिकन हनी अच्छी होगी।

८—यह सब मिलकर जितना हो उससे चौगुना शाक-भाजी और फल। शाक-भाजी में पत्ती अधिक और फल मय छिलके के।

९—और यह सब मिलकर जितना हो उतनी ही आॅयल-केक याने खली।

बच्छराज—(आश्चर्य से) खली !

गोपाल नंदन—(बच्छराज की ओर देखकर) हाँ, खली। वह तो बिटेमिन का घर, निवास स्थान है। (कुछ रुक कर) यह भोजन का आदर्श चार्ट है।

बच्छराज—और पीना क्या चाहिए ?

गोपाल नंदन—उसी पर मैं आ रहा था। खाद्य के बाद पेय का ही मुख्य स्थान है। शराब की बाबत तो आपसे कुछ कहना ही निरर्थक है। चाय, काफ़ी, कोको आदि को भी हाथ नहीं लगाना चाहिए।

बच्छराज—ऐसा ?

गोपाल नंदन—हाँ, एक साल तक चाय का एक प्याला पीने का क्या मतलब है, आप जानते हैं ?

बच्छराज—क्या ?

गोपाल नंदन—एक जोड़ी जूता पेट में खा लेना।

बच्छराज—याने ?

गोपाल नंदन—याने यह कि उसमें चमड़े के द्रव्य रहते हैं। (कुछ रुककर) प्रातःकाल आपको नीरा पीना चाहिए। दोपहर को थोड़ा-सा दूध और वह डायल्यूट करके, याने एक आउन्स दूध और तीन आउंस पानी, फिर बिना शक्कर।

बच्छराज—तो दूध मुझे मुफ़ीद न होगा ?

गोपाल नंदन—बात यह है कि आपका झुकाव मुटाई की तरफ़ है। आपके पिता जी भी मोटे थे, दादा जी भी। इसीलिए आपको चरबी वाली चीज़ों से दूर रहना चाहिए। तभी तो मैंने मक्खन भी चार माशे तीन रत्ती ही लिखा है। यह भी एक एक, आधी-आधी, चौथाई-चौथाई, रत्ती आप घटा सकें तो अच्छा ही होगा। और दूध भी आपको बहुत कम ही पीना चाहिए।

[दोनों कुछ देर चुप रहते हैं। गोपाल नंदन नोट-बुक के पन्ने इधर-उधर से उलटकर, नोट-बुक बन्द कर बच्छराज को देता है।]

बच्छराज—(नोट बुक लेते हुए) मैनी मैनी थैंक्स, डाक्टर।

गोपाल नंदन—मैंने आपको सिर्फ मोटी मोटी बातें बतायी हैं। ब्योरे में तो सब चीज़ें आपको नोट बुक में मिलेंगी। (कुछ रुक कर) बहू जी के आने के पहले ठीक वक्त पर आपने मुझसे इस विषय में सलाह ली। इस नोट-बुक के अनुसार आप चलें तो मैं गैरन्टी दे सकता हूँ कि आप नीरोग सौ वर्ष तक जियेंगे। आपका शरीर फूल-सा हलका और सुन्दर रहेगा। चिड़िया के सदृश आप में फुर्ती रहेगी। दिल और दिमाग़ ऐसे रहेंगे जैसे ऋषियों, महर्षियों के रहते थे और बल रहेगा अर्जुन के सदृश भीम के समान नहीं।

बच्छराज—(नोट-बुक के पेज उलटते हुए) डाक्टर, मैं आपके कथन का अक्षरशः पालन करूँगा।

गोपाल नदन—मुझे यक़ीन है। आप मनस्वी हैं, दृढ़ प्रतिज्ञ हैं। शरीर के सब अवयवों से हलकी कुछ तोले, माशे और रत्तियों की यह जीभ सब से प्रधान चीज़ है। इसके चंगुल से छुटकारा पाना सहज नहीं। अरे ! मैं तक इस आदर्श खान-पान पर टिका नहीं रह सकता; कई बार फिसल पड़ता हूँ। पर आप······आप पर मुझे विश्वास है कि अपनी टेक पर क़ायम रहेंगे।

बच्छराज--(नोट-बुक देखते हुए) डाक्टर, इस नोट-बुक रूपी गागर में सचमुच आपने सागर······हाँ, सागर भर दिया है।

यवनिका

—: * :—

पहला दृश्य

स्थान—बच्छराज का भोजनालय

समय—मध्याह्न

[भोजनालय आधुनिक डाइनिंक-रूम के सदृश सुन्दरता से सजा है। दीवालें और छत रंगी हैं। दीवालों में अनेक दरवाज़े और खिड़कियाँ हैं,

जिनसे बाहर के बगीचे का कुछ हिस्सा दिख पड़ता है, जिसे मध्याह्न के सूर्य की श्वेत किरणें आलोकित किये हैं। दरवाज़ों और खिड़कियों पर महराबदार मखमली परदे पड़े हैं। दीवालों पर कई चित्र टँगे हैं। फ़र्श पर संगमरमर लगा है और उस पर सफ़ेद मेज़ से ढँकी एक लम्बी पोश खाना खाने की टेबिल रखी है। टेबिल के चारों ओर ऊँची चमड़े की गद्दीदार कुर्सियाँ हैं। टेबिल पर अनेक एल्यूमीनियम के डब्बे और चौड़े मुँह की काँच की शीशियाँ रखी हैं; सब के ढक्कन खुले हैं। डिब्बों में तरह-तरह की मिठाइयाँ और नमकीन भरे हैं और शीशियों में मुरब्बे तथा अचार। डिब्बों और शीशियों के पास चाँदी की कई छोटी-छोटी रकाबियाँ, कटोरियाँ और चमचे रखे हुए हैं। कपिला इन डिब्बों और शीशियों में से चमचों के द्वारा मिठाइयाँ, नमकीन मुरब्बे, अचार इत्यादि निकाल-निकाल कर तश्तरियों में और कटोरियों में बड़े उत्साह से सजा रही है। कपिला अठारह-उन्नीस वर्ष की गौर वर्ण की ऊँची-पूरी, भरे हुए मुख तथा शरीर की सुन्दर स्त्री है। रेशमी साड़ी और शलूका पहने है तथा रत्नजटित आभूषणों से सुसज्जित है। अच्छेलाल का एक बड़ा भारी चाँदी का ट्रे (एक तरह की बड़ी थाली) लिए हुए प्रवेश। इस ट्रे में कच्चे गेहूँ, अंकुरित चने, चोकर, सोयाबीन, राब, मक्खन, शहद, भाजियाँ, आम, केले, संतरे, मोसंबी, सेब के छिलके और खली रखे हैं। एक काँटा और तोले माशे के बाँट, रत्तियाँ, और खस खस के दाने भी रखे हैं। अच्छेलाल करीब ३० वर्ष का गेहुयें रंग का ऊँचा-पूरा, गठे हुए शरीर का मनुष्य है। वह सफ़ेद वर्दी लगाये है। आते ही वह ट्रे को टेबिल पर रख देता है और मुसकराता हुआ इन मिठाइयों, नमकीन, मुरब्बों, अचारों इत्यादि की तरफ़ देखता है। कपिला आश्चर्य से इस ट्रे और इसके सामान की ओर देखती है।]

कपिला—(सामना रकाबियों और कटोरियों में सजाना बन्द कर) यह सब क्या है, अच्छेलाल ?

अच्छेलाल—मालिक का खाना, मालकिन !

कपिला—(और भी आश्चर्य से) मालिक का खाना ?

अच्छेलाल—जी हाँ।

कपिला—तेरे मालिक इसे खायँगे ?

अच्छेलाल—आज कल वे सान्टफक खाना खाते हैं, मालकिन !

कपिला—सान्टफक खाना क्या !

अच्छेलाल—(ट्रे के सामान की ओर संकेत कर) यही कच्चा गेहूँ, इस टड गरम, जो छत्तीस घंटे पानी में रखकर तैयार किया जाता है चोकर, साबून, राब, पालायन बटर, फरासीसी हन्नी, भाजी फलों के बकले और खली।

कपिला—(और अधिक आश्चर्य से) याने ?

अच्छेलाल······याने !······याने······मैं समझा नहीं, मालकिन !

कपिला—तू समझा नहीं······मैं भी नहीं समझी अच्छेलाल।

[अच्छेलाल कुछ देर चुप रहता है। जब कपिला और कुछ नहीं कहती तब काँटे से एक-एक चीज को तोलना शुरू कर, अलग-अलग तश्तरी और कटोरी में रखना आरंभ करता है।]

कपिला—(आश्चर्य से चिल्ला कर) और यह तू क्या करता है ?

अच्छेलाल—(तोलते-तोलते) इन सब सामानों को तोलता हूँ, मालकिन।

कपिला—तोलता······तोलता है······तोलता क्यों है !

अच्छेलाल—वे हर चीज़ को तोल-तोल कर खाते हैं, मालकिन।

कपिला—अच्छेलाल, तू पागल तो नहीं हो गया ?

अच्छेलाल—(तोलते तोलते ही) मैं····· मैं, मालकिन ! मैं तो समझता हूँ मैं पागल नहीं हूँ।

[कपिला कुछ न कह चुपचाप उस तोल को देखती है। अब अच्छेलाल मक्खन को माशे और रत्तियों से तोल रहा है। चौथाई रत्ती के लिए कुछ खस-

खस के दानों को काँटे के एक पलवे में डालता है। जब जिस पलवे में मक्खन है, वह कुछ भारी रहता है, तब एक पतली सी चाँदी की सोंक से उसके मक्खन को निकालता है।]

कपिला—मक्खन की तोल रत्तियों और खसखस के दानों से होती है !

अच्छेलाल—हाँ, मालकिन ! हर हफ्ते चौथाई रत्ती बटर कम किया जाता है और चौथाई रत्ती के लिए खसखस के दानों के सिवा और कोई बाँट मिलते ही नहीं।

कपिला—मुझे अब इसमें थोड़ा भी सन्देह नहीं कि या तो तू पागल हो गया है, या तेरे मालिक।

अच्छेलाल – (अपना काम जारी रखते हुए) मैं…… मैं तो, मालकिन बिलकुल……कितई पागल नहीं हूँ।

कपिला—तब तेरे मालिक हैं ?

[अच्छेलाल कोई उत्तर नहीं देता। कपिला चुपचाप उस तोल को देखती रहती है अब अच्छेलाल फलों के छिलके की तोल पर पहुँचता है।]

कपिला—और फल न खाकर फलों के छिलके खाते हैं ?

अच्छेलाल—जी हाँ, सान्टफक बकले ही हैं।

[फिर कपिला कुछ नहीं कहती। कुछ देर फिर निस्तब्धता। अब खली तुलना शुरू होती है।]

कपिला—और खली सब से ज्यादा ?

अच्छेलाल—जी हाँ, जितना सब खाना उतनी अकेली खली। इसमें सबसे जादा विटमनी है।

कपिला—विटमनी ! विटमनी क्या ?

अच्छेलाल—सो तो मैं नहीं जानता, कोई खास तरह की मणियाँ होगी।

कपिला—मणियाँ ?

अच्छेलाल– जी हाँ, जैसे मोती, पन्ना, मानक की भस्में, आँखों से राख सी दिखतीं पर वैद्यों, हकीमों की राय से ताक़त पहुँचती है, उसी तरह ये भी आँखों से न दिख ताक़त पहुँचाती होंगी। (कुछ रुककर) मालकिन, यह सब डाक्टर गोपाल नंदन को मालूम है।

कपिला—(कुछ विचारते हुए) समझी; तो डाक्टर गोपाल नंदन ने कच्चे गेहूँ, भीगे चने, चोकर, फलों के छिलके, और खली, मिलाकर उनके मनुष्य के शरीर के योग्य नहीं, पर उनके नाम के लायक़ खाना बना दिया है। मेरे लिए भी शायद इसी प्रकार के खाने का नुस्ख़ा तैयार होगा, क्योंकि मेरा नाम भी तो कपिला है न ?

अच्छेलाल—(कपिला की ओर देखते हुए) मैं समझा नहीं, मालकिन।

कपिला—यह तेरे समझने की नहीं, उनके समझने की बात है, अच्छेलाल !

[अच्छेलाल कोई उत्तर न दे सब रकाबियों और कटोरियों को व्यवस्थित रूप से जमाता है। कुछ देर फिर निस्तब्धता।]

कपिला—तो मेरे मालिक ससुराल से आयी हुई यह मिठाई, नमकीन, मुरब्बे, अचार कुछ न खायँगे ?

अच्छेलाल—सो तो मैं कैसे कह सकता हूँ, मालकिन; पर......पर (चुप हो जाता है।)

कपिला—पर क्या !

अच्छेलाल—मैं यह कह रहा था कि इन सब चीज़ों को वे डड़फ़ड़स कहते हैं।

कपिला—डड़-फड़स क्या ?

अच्छेलाल—मुर्दा खाने।

कपिला—मुर्दा-खाने । याने······याने ?

अच्छेलाल—याने······याने ······

[बच्छराज का प्रवेश ।]

बच्छराज—(टेबिल के पास आ अपने भोजन और डिब्बों, शीशियों को देख, कपिला से) ओ ! सचमुच मैं ससुरजी और सासजी का बड़ा अनुगृहीत हूँ, कि उन्होंने यह सारा बेशक़ीमती सामान मेरे लिए भेजा; किन्तु······किन्तु, डियर, यह सब डेड्-फूड्स की संज्ञा में है । विटेमिन, 'ए' से लेकर 'ज़ेड' तक, जितने अबतक निकल आये हैं, और निकलने वाले हैं, सबसे रहित । किसी ·· ··किसी को भी, तुम्हें तक, सास ससुरजी को भी इन सब चीजों को नहीं खाना चाहिए, अरे ! छूना तक नहीं चाहिए, । (अपने खाने की ओर संकेत कर) वह है साइन्टिफ़िक फ़ूड । सौ वर्ष तक जीने, नीरोग रहने, शरीर को फूल-सा हलका और सुन्दर रखने, चिड़िया के सदृश फुर्तीलापन लाने, दिल और दिमाग को ऋषि महर्षियों के सदृश बनाने और अर्जुन के सदृश बल पाने के लिए ठीक खाना सब से ज़रूरी है । ठीक खाने के लिये आवश्यक बातें हैं—अग्न का बहिष्कार, अल्पाहार, कम्पैटिबिलटी, प्रपाशन की स्टैबिलटी और पीने शब्द के स्थान पर चाबने शब्द की नियुक्ति । (कुर्सी पर बैठते हुए मुसकराकर) अभी तुम इस सब मामले को अच्छी तरह समझ न सकोगी । इसके लिए मुझे तुम्हें कई लैक्चर देने होंगे ; हाँ दूसरों से तुम जल्दी समझोगी, क्योंकि तुम पढ़ी-लिखी हो । फिर मेरे शरीर को देखकर भी तुम समझ सकती हो । हर हफ्ते में दो-तीन पाउंड घट रहा हूँ । शरीर फूल सा हलका हो रहा है, पर साथ ही मुझमें चिड़िया-सा फुर्तीलापन आ रहा है, दिल और दिमाग़ ताज़े हो रहे हैं । शरीर में सच्ची ताक़त आ रही है । (कच्चे गेहूँ चबाते हुए) बैठो मैं सब······सब तुम्हें समझाऊँगा ।

[कपिला दूसरी कुर्सी पर बैठती है ।]

लघु यवनिका

दूसरा दृश्य

स्थान—बच्छूराज का भोजनालय

समय—सन्ध्या

[दृश्य वैसा ही है जैसा पहले दृश्य में था। पर इस समय टेबिल के चारों ओर की कुर्सियाँ भरी हैं। हर कुर्सी के सामने दो-दो बड़े थाल रखे हैं। दोनों के बीच में मेनू के चार्ट की जगह गोपाल नंदन के नोट छोटे-छोटे स्टैन्ड पर टँगे हैं। एक थाल में वैज्ञानिक भोजन है और दूसरे में कपिला के मैके से आया हुआ। बच्छूराज की कुर्सी के सामने सिर्फ एक वैज्ञानिक भोजन का थाल है। मेहमानों में डाक्टर गोपाल नंदन भी हैं। वैज्ञानिक भोजन बच्छूराज के सिवा और कोई नहीं छूता। सब लोग मिठाई, नमकीन आदि पर टूटे हुए हैं। हाँ, डाक्टर गोपाल नंदन, जब कभी बच्छूराज उसकी ओर देखता है, तब मिठाई, नमकीन के थाल में से हाथ हटा वैज्ञानिक भोजन के थाल में से जल्दी से कुछ खाने लगता है, पर ज्योंही बच्छूराज की दृष्टि वहाँ से हटती है, त्योंही फिर मिठाई नमकीन पर टूट पड़ता है।]

एक मेहमान—बहूजी के प्रवेश का यह दिन मुझे तो हमेशा याद रहेगा।

दूसरा—हाँ, हाँ, क्यों नहीं, क्यों नहीं, दो-दो तरह का इतना सुंदर भोजन!

तीसरा—एक पूरा वैज्ञानिक और दूसरा इतना स्वादिष्ट।

बच्छूराज—पर वैज्ञानिक भोजन के थाल में तो आप लोगों ने हाथ भी नहीं लगाया।

गोपाल नंदन—इसके लिए स्वाद को सुसंस्कृत करना पड़ता है बच्छूराज जी; बात यह है कि हम लोगों ने अस्वाभाविक और कृत्रिम भोजन की ऐसी बुरी आदत डाल ली है कि स्वाभाविक और अकृत्रिम भोजन अच्छा ही नहीं लगता।

चौथा—बेशक, बेशक ।

पाँचवाँ—पर, डाक्टर साहब, रोटी, दलिया इत्यादि आग पर बनी हुई चीज़ें, उबली हुई तरकारियाँ और सब तरह के फल तो नये से नये वैज्ञानिक अनुसंधानों के अनुसार भी खाये जा सकते हैं न? यहाँ के वैज्ञानिक थाल में तो सिर्फ़ कच्ची चीज़ें तरकारियों में केवल भाजियाँ और फलों के छिलके भर हैं!

गोपाल नंदन—हाँ, मैं तो……

बच्छूराज—(बीच ही में) आप ठहरिए, डाक्टर, मैं इसका रहस्य समझाता हूँ। देखिए, वैज्ञानिक खोज अभी हो रही हैं, पूरी नहीं हुई। वैज्ञानिकों का कथन है कि आग पर बनी हुई चीज़ों से कच्ची चीज़ें श्रेष्ठ हैं, तरकारियों में भाजियाँ उत्तम और फलों में उनके छिलके सर्वोत्तम। आप देखेंगे अगली शोधों में आग के पूरा बायकाट के लिये कहा जायगा। तरकारियों में शेष तरकारियाँ छोड़ कर, भाजियाँ और फलों में, उनके गूदे और रस को छोड़, सिर्फ़ छिलकों को खाने की हिदायत होगी। आई हैव स्टोलन ए मार्च ऑन फ़्यूचर रिसर्चेज़।

छठवाँ—ओह! कॉंग्रेच्यूलेशन्स! हार्टी कॉंग्रेच्यूलेशन्स!

बच्छूराज—और देखिए, डाक्टर गोपाल नंदन, आपने मुझे आदर्श भोजन के संबंध में पाँच बातें बतायी थीं—अग्नि का बहिष्कार, अल्पाहार काम्पैटिबिलिटी, प्रपोर्शन की स्टैबिलिटी और पीने शब्द के स्थान पर चाबने शब्द की नियुक्ति।

गोपाल नंदन—जी हाँ।

बच्छूराज—पर आपने इन बातों के कारण नहीं बताये थे। मैंने इनके सच्चे कारणों को सोचा है।

गोपाल नंदन—अच्छा।

बच्छराज—देखिए, आग के बहिष्कार का कारण है हर प्राणी में स्वाभाविक जठराग्नि का रहना। दो बार कोई चीज़ गरम करने से वैज्ञानिक दृष्टि से उसमें दोष आ जाते हैं, अतः भीतरी अग्नि के रहते बाहरी अग्नि का उपयोग भोजन में कैसे किया जा सकता है ?

गोपाल नंदन—वाह ! वाह ! वाह ! वाह ! कैसा सुन्दर अनुसंधान है।

पहला—बेशक, बेशक।

बच्छराज—अल्पाहार का सबब यह है कि अहार से शरीर की वृद्धि होती है और निराहार रहने से दिमाग़ की। पशु इसीलिए अधिक खाता है कि उसके शरीर की ही वृद्धि हो सकती है, दिमाग़ की नहीं। मनुष्य ही दिमाग़ी प्राणी है। अल्पाहार करते-करते मनुष्य को तो निराहार हो जाना चाहिए। तभी दिमाग़ पूरी तरह चमकता है; ऋषि-महर्षियों ने बड़े बड़े अनुसंधान निराहार तपस्या के बाद ही किये हैं।

गोपाल नंदन—क्या बात है, क्या बात है, अद्भुत खोज है, आपकी, अद्भुत खोज !

दूसरा—निःसन्देह, निःसन्देह।

बच्छराज—कम्पैटिबिलटी तो हमारे भारत में जितनी थी उतनी कहीं नहीं। विश्वामित्र जब राजर्षि से ब्रह्मर्षि हुए तब उन्होंने एक हज़ार वर्ष की तपस्या में केवल लोहभस्म, एक ही चीज़ का भक्षण किया था। धीरे धीरे मनुष्य को एक ही वस्तु खाने का अभ्यास करना चाहिए, दो चीज़ें तक साथ में नहीं खानी चाहिए।

गोपाल नंदन—आपने ठीक, बिलकुल ठीक सोचा।

तीसरा—बिलकुल, बिलकुल।

बच्छराज—पीने के स्थान पर चबाना शब्द कितना ज़रूरी है, इसका पता हमें जानवरों की जुगाली से लगता है। वे खाने और पीने के सारे सामान को पेट में डाल, फिर उसे मुँह में ला, जुगाली करने की नैसर्गिक

शक्ति रखते हैं। मनुष्य में यह नैसर्गिक शक्ति नहीं, इसलिए उसे हर ग्रास या घूँट को एक सौ आठ बार चबाना चाहिए। और पीने शब्द का स्थान आपने तो चबाने को दिया है, उससे भी अच्छा होगा यदि चबाने शब्द का स्थान जुगाली को दिया जाय, क्योंकि जुगाली खाये और पिये दोनों प्रकार के सामान के मिलने के बाद की जाती है।

गोपाल नंदन—आप में खोज करने की नैसर्गिक···नैसर्गिक शक्ति है।

चौथा—सर्वथा, सर्वथा।

बच्छराज—प्रपोरशन की स्टैबिलिटी के संबन्ध में मैं अभी सोच रहा हूँ।

पाँचवाँ—प्रपोरशन की स्टैबिलिटी क्या है सो तो मैं अभी नहीं समझा, पर (आम और केले के छिलके उठाकर) इन छिलकों में विटेमिन की जितनी स्टैबिलिटी होगी उसे देखते हुए मेरे ख़याल से कटहर, अनार, नारियल आदि के छिलकों में विटेमिन कहीं अधिक स्टेबिल रहते होंगे। मैं तजवीज करता हूँ कि वैज्ञानिक भोजन में इन्हें भी स्थान दिया जाय।

छठवाँ—और मैं एक और चीज़ सुझाता हूँ।

बच्छराज—जरूर, ज़रूर।

छठवाँ—मेरा ख़याल है कि आगे की खोजों के द्वारा वैज्ञानिक भोजन में एक बहुत बड़ा खाद्य पदार्थ और जोड़ा जायगा।

बच्छराज—कौन-सा ?

छठवाँ—दूर्वादल।

[बच्छराज को छोड़ सब लोग हँस पड़ते हैं। गोपाल नंदन केवल मुसकराता है।]

छठवाँ—(मुसकराते हुए) नहीं, नहीं, हँसने की बात नहीं। मुझे विश्वास है कि शोध के बाद पता लगेगा कि दूर्वादल में 'ए' से 'जेड' तक सारे विटेमिन हैं; और इसका कारण है।

बच्छूराज—क्या !

छठवाँ—प्राचीन भारतीय सभ्यता का हर पहलू विज्ञान की नींव पर खड़ा है। मामूली-मामूली बातों में भी वैज्ञानिक रहस्य भरे हैं। मसलन हम गोबर से जमीन लीपते हैं। गोबर से ज्यादा एन्टीसैप्टिक शायद कोई चीज ही नहीं। हमारे चौक में तुलसी घरा रहता है। तुलसी से अधिक हवा को साफ़ करने वाला कोई पौधा नहीं। हमारे यहाँ गणेश जी का पूजन सबसे पहले क्यों होता है, आप लोग जानते हैं ?

पहला—आप ही बताइए।

छठवाँ—विद्या और बुद्धि में वे सब देवताओं से श्रेष्ठ हैं। सृष्टि में सब से बुद्धिशाली दो प्राणी हैं—मनुष्य और हाथी। दोनों का गणेश जी के शरीर में मेल है ! आप जानते हैं उनका मुख्य भोजन क्या है ?

दूसरा—दूर्वादल।

छठवाँ—बिलकुल ठीक। अरे, भारतीयों ने जिस चीज का पता हजारों वर्ष पहले लगाया, विज्ञान ने आज। यह विटेमिन थियोरी यथार्थ में हमारी थियोरी है। तपोवनों म, जहाँ हर ज्ञान का अनुसधान हुआ, यहाँ के ऋषि, मुनि, ब्रह्मचारी कच्चे कन्दमूल ही तो खाते थे; निरोग रहते थे; हजारों वर्ष जीते थे। हमारे विद्या और बुद्धि के देवता के प्रधान भोजन दूर्वादल में 'ए' से लेकर 'जेड' तक सारे विटेमिन होना ही चाहिए।

बच्छूराज—(अत्यन्त गम्भीरता से) आप बिलकुल ठीक कहते हैं। मैं तो विज्ञान का नेतृत्व करता हूँ। कल······कल से ही लीजिए, मैं दूर्वादल को अपने भोजन में अवश्य जोड़ूँगा और थोड़ा बहुत नहीं; सब चीज़ों के बराबर खली रहती है, खली से दूना दूर्वादल होगा।

[सब लोग खिलखिला कर हँस पड़ते हैं। डाक्टर गोपाल नंदन अपना गला साफ़ करता है।]

लघु यवनिका

श
य
अ
व
प

तीसरा दृश्य

स्थान—बच्छूराज के मकान में अच्छेलाल की कोठरी

समय—रात्रि

[नौकरों के रहने के योग्य कोठरी है, पर काफ़ी बड़ी। अच्छेलाल, उसकी स्त्री, और उसका एक बच्चा तथा बच्ची—छिलके निकले हुए फलों—आम, केले, संतरे, मोसंबी सेब इत्यादि को, जो आज की दावत के कारण प्रचुर परिमाण में सब के बीच में रखे हैं, खूब खा रहे हैं। बच्चे तालियाँ बजा-बजा कर हँस और किलक रहे हैं।]

औरत—अब तो पेट में जगह नहीं रही।

अच्छेलाल—(बच्चों से) और खाओगे?

बच्चा—ना, बाबा; उलटी हो जायगी।

बच्ची—हाँ, हाँ, अब नहीं, अब नहीं।

अच्छेलाल—(उठते हुए) अच्छी बात है, मुहल्ले में बाँटे आता हूँ। (हँसते हुए) पर, इतना सबसे कह दूँगा मणि निकल गयी है, सूत रह गया है, मणि निकल गयी है, सूत रह गया है।

यवनिका

—:*:—

उपसंहार

स्थान—बच्छराज का शयनागार

समय—प्रात:काल

[शयनागार आधुनिक बेड-रूम के सदृश सुन्दरता से सजा है। दीवालें और छत रंगी हैं। दीवालों के दरवाजे और खिड़कियों से आकाश और वृक्षों के ऊपरी भाग दिखायी देते हैं, जिससे जान पड़ता है कि कमरा दूसरी या तीसरी मंज़िल पर है। आकाश में प्रातःकाल के सूर्य की रक्त रश्मियाँ दीखती हैं। एक दरवाजे से नीचे उतरने के जीने का कुछ हिस्सा दिखता है। दरवाजे और खिड़कियों पर धूप-छाँह के रेशमी पर्दे पड़े हुए हैं। दीवालों पर कृष्ण-लीलाओं के अनेक रंगीन चित्र टँगे हैं। छत से दो बिजली की बत्तियाँ और एक सीलिंग-फेन झूल रहे हैं। बत्तियों पर रेशमीशेड हैं, जिनके किनारों पर पोत के काम की झालर हैं। जमीन पर क़ालीन है। एक ओर चाँदी के पायों का एक पलंग बिछा है और दूसरी तरफ़ एक गद्दीदार सोफ़ा सेट है तथा उसके बीच में रेशमी मेज़पोश से ढँकी एक टेबिल। सुबह हो जाने पर भी बच्छराज पलंग पर लेटा है। उसका शरीर एक रेशमी दुलाई से ढँका है। चेहरा भर खुला है। उसका चेहरा एक दम उतरा हुआ है। आँखों के चारों ओर कालिमा तथा मस्तक पर शिकन दिखायी पड़ते हैं। कपिला जीने से चढ़ते हुए जल्दी-जल्दी आती है।]

कपिला—(बच्छराज के पलँग के निकट जा उसके सिर पर हाथ रखते हुये) क्यों, कैसी तबियत है, आज उठोगे नहीं!

बच्छराज—(लम्बी साँस लेकर) क्या कहूँ उठा ही नहीं जाता।

कपिला—(पलँग के एक कोने पर बैठते हुये) उठा जाये कैसे! पेट में

कुछ पहुँचता हो तब न ! (कुछ रुक कर) आप अपने हाथ से अपनी तबियत बिगाड़ रहे हैं ।

[बच्छराज कुछ न कहकर करवट ले, कपिला की ओर पीठ कर लेता है। कुछ देर निस्तब्धता ।]

कपिला—(उठकर पलंग के दूसरे बज़ू जाकर) मैं कहती हूँ मान जाइए । देखिए तो आँखों के चारों तरफ़ कैसी स्याही आगयी है । सिर पर कैसे शिकन पड़ गये हैं । (पलंग के एक कोने पर बैठकर) अभी...... अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा है । अगर आप इस विटेमिन पिशाच से अपना पिंड छुड़ा लें, रोज़मर्रा का साधारण भोजन करने लगें, तो एक हफ़्ते में तबियत ठीक हो जायगी ।

बच्छराज—लेकिन......लेकिन, डियर, विज्ञान इतना झूठा हो सकता है ? उसकी थियोरी इतनी ग़लत सिद्ध हो सकती है ? मेरा ख़याल है कि भोजन मेरी अस्वस्थता का कारण नहीं, इसका सबब कुछ दूसरा ही होना चाहिए ।

कपिला—तो दूसरा सबब आख़िर है क्या ? बुखार आपको आता नहीं, दस्त आपको लगते नहीं, और कुछ होता नहीं, बिना किसी कारण के दिन पर दिन कमज़ोरी भर बढ़ती जाती है । जिन फलों आदि के छिलके खा-खा कर, आप अपनी यह हालत कर रहे हैं, उन फलों इत्यादि को खा-खा कर अच्छेलाल कैसे अच्छे हो रहे हैं, सो देखिए । मैं कहती हूँ विज्ञान की ऐसी फ़ैड ही आपकी इस हालत का कारण है । हमारे यहाँ कहा है—'अति सर्वत्र वर्जयेत' । आपने इस विटेमिन के मामले में अति कर डाली है ।

बच्छराज—पर, प्यारी डाक्टर गोपाल नंदन को शक हो रहा है कि मुझे एपेन्डीसाइटिस हो रही है ।

कपिला—(क्रोध से) गोपाल नंदन ! गोपाल नंदन ? एपेन्डीसाइटिस हो रही है । अगर एपेन्डीसाइटिस भी हो रही होगी तो इसी भोजन की

बदौलत। मैंने सुना है कि गांधी जी को भी एपैन्डोसाइटिस कच्चे गेहूँ खाने के कारण हुई थी। उनके आश्रम के और भी कुछ लोगों को इसी तरह के प्रयोगों के कारण इसी प्रकार की कुछ बीमारियाँ......।

बच्छराज—(बीच ही में) लेकिन, डार्लिंग, डाक्टर, साइन्स और उसकी थियोरीज़......

कपिला—(और भी क्रोध से) अरे जहन्नुम में भेजिए इन डाक्टरों, उनके साइन्स और थियोरीज़ को। आप जानते हैं, मेरे मैके में यदि कभी बीमारी के कारण डाक्टर, वैद्य या हकीम को बुलाना पड़ता है तो उसकी विदाई के वक्त क्या किया जाता है ?

बच्छराज—क्या ?

कपिला—जब वह दरवाज़े के बाहर हो जाता है तो जिस रास्ते से वह बाहर तक जाता है उसी रास्ते एक जलता हुआ लूघड़ दरवाज़े तक ले जाकर उस लूघड़ को दरवाज़े पर पत्थरों से मार-मार कर ठंढा किया जाता है, याने उसके आने के अशकुन को इस प्रकार जला दिया जाता है।

बच्छराज—(कुछ विचारते हुये) अरे ! तुम तो मुझे एक बड़ी विचित्र बात की याद दिला रही हो।

कपिला—किस बात की ?

बच्छराज—जिस दिन डाक्टर गोपाल नंदन मेरी दिनचर्या तथा भोजन आदि के संबंध में नोट बुक तैयार करके लाया उस दिन मैंने उससे एकएक पूछा—समझाओ, इसमें क्या लूघड़-पत्थर लिखा है।

कपिला—(कुछ प्रसन्नता से) आपके मुँह से भगवान ने ठीक बात निकलवा दी थी। उसमें अवश्य ही लूघड़ पत्थर ही लिखा है। जला दीजिए उस नोट-बुक को, और बिदा कीजिए उस डाक्टर गोपाल नंदन को भी, एक लूघड़ और कुछ पत्थरों के साथ।

बच्छराज—(सोचते हुए) परन्तु, यदि विज्ञान पर भी विश्वास न रखा जाय तो संसार में आख़िर विश्वास का आधार क्या रह जाता है

कपिला—विज्ञान पर अविश्वास करने को मैं नहीं कहती।

बच्छराज—तब!

कपिला—मैं कहती हूँ। विज्ञान का फ़ैड छोड़ने के लिए। विज्ञान के अनुसार भी स्वाभाविक जीवन इसे नहीं कहते जो आप चला रहे हैं। अकृत्रिम भोजन वह नहीं है जो आप खा रहे हैं। इस प्रकार का जीवन चला, ऐसा भोजन कर, हमारे पूर्वज सौ-सौ वर्ष नहीं जिये। नीरोग नहीं रहे। उनका शरीर फूल सा हलका और सुन्दर नहीं रहा। उनके दिल और दिमाग़ ताज़े नहीं रहे। उनमें अर्जुन सा बल नहीं रहा। फैडिस्ट न होइए। अस्वाभाविक जीवन बिताना बुरा है, यह मैं मानती हूँ, पर किसी बात की अति करना भी उतना ही बुरा है। और एक······एक बात और करनी होगी।

बच्छराज—कौन सी?

कपिला—हमें अपने नाम भी बदलने होंगे। मैं अपना नाम कपिला की जगह कमला रखूँगी और आप अपना नाम (एक कागज़ का चिट सलूका के जेब से निकाल बच्छराज को दे) यह रखिए, क्योंकि मैं मुँह से आपका वर्तमान और भविष्य नाम क्यों कर लूँ।

बच्छराज—(कागज लेकर उसे पढ़ कर) पद्मराज?

कपिला—जी हाँ।

बच्छराज—पर यह क्यों, डियर!

कपिला—यह इसलिए जिससे आगे चल कर गोपाल नदन के सदृश कोई गो-नदन हमें कच्चे गेहूँ, अंकुरित चने, चोकर, खली और दूर्वादल की सानी न······न खिला सके।

[बच्छराज जोर से हँस पड़ता है। कपिला भी हँसने में उसका साथ देती है।]

यवनिका

समाप्त

—:❀:—